प्रध्युम्नशिखरासीनां मातृचक्रोपिशोभिताम्।
पीठेश्वरीम् शिलारूपां शारिकाप्रणमाम्यहम्।।



स्तोत्र पाठ-संग्रह

सम्पादक

श्री श्री जगद्-अम्बा शारिका चक्रेश्वर संस्था
हारी-पर्वत

सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक :
फाइन आर्ट प्रेस, हब्बा कदल,
श्रीनगर-कश्मीर

शुद्धिपत्रम्

पृष्ट	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
३	१४	हन्तकं	हन्तृकं
४	१९	मरुणच्छार्थं	मरुणच्छायं
५	९	उमापतेः	उमासुतं
७	२०	दाद्यरिस्य	दारिद्र्यस्य
८	११	शं वरोतु	शं करोतु
९	१०	उद्यद्भास्वतसमाभा	......समाभां
११	१९	ममाम्यकुञ्जकुहाराद्धा	ममास्यकुहराद्धा
१२	७	भुक्ताहारलसत्	मुक्ताहारलसत्
१२	२१	माला...स्तक	मालापुस्तक
२६	२०	धर्मं	घर्मं
२८	१४	गृहिणा	गृहिणी
२९	७	तदद्वद्व	तद्द्वन्द्वं
३१	१२	क्षित्यन्त	क्षित्यन्तं
३२	१६	त्यवश्म्	त्यवश्यम्
३५	५	भेधासि	मेधासि
४४	११	यशोदगर्भसम्भवः	यशोदागर्भसम्भवा
४७	१२	तत्वैस्तै	तत्त्वैस्तैः
५१	२	कमनाशा	कर्मनाशा
५१	१४-१५	शट्चक्रक्र	षट्चक्रक्र
५२	६	षुष्पबाणेक्षु	पुष्पबाणेक्षु
५३	३	महिषासुरधातिनी	महिषासुरघातिनी
५३	१४	वल्लातन्तुसमुत्थाना	वल्लीतन्तुसमुत्थाना
५३	२१	मृगत्वक्ड्मृणलोचना	मृगत्वङ्मृगलोचना
५७		सुपृहा	सुस्पृहा
५८	१	शङ्खहता	शङ्खहस्ता च
५८	१६	सर्वश्रवगोचरा	सर्वश्रवणगोचरा

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
६४	२	जलोदरा	जलोदरी
६४	५	शिवादूती	शिवदूती
६९	१२	हृतवहस्थिति	हुतवह
७२	१८	साबन्धो	सम्बन्ध
७२	२०	भूमिस्त्वयि	भूमिस्त्वयि
७३	८	गुणमखिलमद्यभः	गुणमखिलमद्भ्यः
७३	२१	ययर्लाक्षा	ययोर्लाक्षा
७६	२	सत्का-	—सत्कार
७७	२	सूर्येन्द्वग्नि	सूर्येन्द्वग्नि
८०	१५	भिरीशादिच	भिरीशाच
८३	५	दतद्यवोम	दतलद्व्योम
८८	४	विस्तीर्णा	निस्तीर्णा
८८	१७	अतर्क्यैश्वर्यं	अतर्क्यैश्वर्यें
८९	१४	विस्फूजितमिदम्	विस्फूर्जितमि
९१	४	सपर्या	सपर्या
९२	२	तदिमअपराध	तदिदमपराधद्वय
क	१३	जिसक	जिसके
क	२१-२२	प्रध्युम्न पोठ-प्रध्युम्न	प्रद्युम्नपीठ प्रद्युम्न
ख	१	,,	,,
ग	१९	भूल	मूल
घ	३	षोडषकोण	षोडशकोण
ङ	१०	आता था	आती थी
च	१	पुयष्टक	पुर्यष्टक
च	४	पर्यष्टक	पुर्यष्टक
च	९	महाविद्यारं	महाविद्याएं
च	११	अभिप्रत	अभिप्रेत
छ	१५	हृस्व	ह्रस्व
ज	११	शवशास्त्र	शैवशास्त्र
ज	१९	शवदर्शन	शैवदर्शन

3

प्रिय भक्तगण (शारिका) स्तोत्र संग्रह का पाठ आरम्भ करने से पहिले निम्नलिखित त्रुटियों को ठीक करें ।

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
४	१४	प्रकृष्टिविभव	प्रकृष्टविभव
७	२२	दाद्यरिस्य	दारिद्रयस्य
९	३	काद्यं	कायं
११	२१	ममाम्य	ममास्य
१२	१	पुष्पावलिवन्दा	पुष्पावलिवृन्दा
१५	९	साक्षस्रज	साक्षस्रजं
२२	१०	निहितात्ति	निहितार्ति
२३	२	चिन्तयत्यन्वेवि	चिन्तयत्तन्वेति
२३	१२	लुग्पन्ति	लुम्पन्ति
२३	१५	धवति	धावति
२७	१६	पृथुतरवुच	पृथुतरकुच
२८	२०	षडधल	षडदल
२९	९	द्वादशदशं	द्वादश दलं
४४	११	यशोदगुर्भ	यशोदागर्भ
४८	६	विभम्	विभुम्
५१	१५	शटचक्रेभे	षटचक्रभे
५४	११	सिन्दूरोरुणवकत्रा	सिन्दूराहणवकत्रा
५८	३	तीर्थंकर	तीर्थंकर
५८	१६	सर्वंश्रवगोचरा	सर्वंश्रवणगोचरा
६०	९	उदक्यागत	उदक्या च
६०	१०	पौत्री शिशुप्रिया	पौत्रीनप्त्री शिशुप्रिया

पृष्टम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
६६	६	मोहनेऽनुग्रहेषि	मोहनेऽनुग्रहेपि
७०	४	षट्पञ्चाशाधिवस	षट्पञ्चाशद्दिवस
७०	८	स्फटिकघुटिका	सफ़टिकगुटिका
७२	२१	परिणमयितं	परिणमयितुँ
७३	८	निखलमद्य्भः	
७३	२१	ययलीक्षा	ययोर्लीक्षा
७५	१६	कारैकचिद्रपिणी	कारैकचिद्रषिणी
७५	१६	चैतन्यात्मकैकचक्ररचिता	चक्राकैकाकिनी
७६	१४	श्रचक्र	श्रीचक्र
८२	७	त्रिजगन्मार्तंहिम	त्रिजगन्मातार्हेम
८३	५	सदृतद्यवो	सदृतसद्व्यो
८४	३	मूलमधेः	मूलमधः
८४	११	कार्यविधायिनी	कार्यविद्या।यिनि
८५	१५	मन्तर्निषणम्	मन्तर्निषण्णम्
८६	१८	सर्वपापघ्नं	सर्वपापघ्न
९०	१४	परिनतिम	परिणतिम
९१	९	समर्तृणां	स्मर्तृणां
९२	२	तदिमअपराध	तदिदमपराध
९२	१३	महेशान्नाषरो	महेशान्नापरो
९३	९	भृत्यो भर्ता	भृत्यो न भर्ता
९५	२	कदम्बंप्रसवित्रीम्	कदम्बप्रसवित्रीम्
९५	६	चाप्यचरं	क्वाप्यचरं
९५	१०	सिद्धिसम्पत्ति	सद्धिसम्पत्ति

5

भूमिका

भक्त जनों को विदित ही है कि अनादिकाल से काश्मीर शाक्त-धामों में से एक मुख्यतम धाम है जो केन्द्र भी समझा जाता है। यहां पर शारदा ज्वाला, बीडा, महाराज्ञी, शिवा शारिका के अनुपम धाम हैं प्राचीन काल से श्रीनगर की प्रतिष्ठा बहुत बड गई थी। यहां पर श्रीविद्या जगदम्बा आद्याशक्ति भगवती के पांच मुख्य धाम हैं जो क्रमशः श्रीराजराजेश्वरी श्रीकालेश्वरी, श्रीमहाश्री, श्रीसदभावश्री श्रीलौकेश्वरी हैं इन्ही विशिष्ट शाक्तधामों की सत्ता के फलस्वरूप श्रीनगर का नामकरण हुआ था। इनमें से श्रीराजराजेश्वरी की महत्ता केवल इसलिए थी कि यह स्थान श्रीनगर के मध्य प्रदेश में स्थित था। श्रीनगर की जनता के लिए चारों ओर से यहां पहुँचना सुगम था। यहां पर शक्तिमाता का अनादिकालीन महाचक्र प्रतिष्ठित था। जिसके प्रतिष्ठापक के अथवा प्रतिष्ठा के विषय में यह कहा जाता है कि यह स्वयम्भूचक्र था। अर्थात माता शारिका वागीश्वरी के स्वयंसिद्ध योजना रूप प्रयास के फल स्वरूप शारिकापर्वत के विश्व में प्रवृत्त होने के साथ वहां पर श्रीचक्र अस्तित्व में आया था, इसी कारण अनन्तर इसका नाम श्रीपर्वत भी पाया जाता है। इस स्थान का नाम प्रद्युम्न-शिखर भी पड गया था। यहीं पर श्रीशारिका देवी एक महासुर (बकासुर) को दमन के निमित्त आविर्भूत हुई थी इस स्थान को शारिकापीठ एवं प्रध्युम्नपीठ भी कहते थे। कारण यह है स्थानीय नरेश प्रध्युम्न ने अपने कर कमलों

द्वारा उक्तस्थान का परिष्कार किया था। तब से इसे प्रद्युम्न-पीठ भी कहते थे। जब जब दैवी, मानुषी आपदाओं का काश्मीर को शिकार होना पडा तब २ भक्त एवं साधक काश्मीरी जनता इसी पवित्र स्थान के शरण में आकर इसी का आश्रय लेती रही और अनुपम तथा अद्‌भुतसिद्धियों का चमत्कार देखकर इस स्थान का नाम सिद्धपीठ भी पड गया था तथा आजकल यह स्थान सिद्धपीठ के नाम से ही यहां परम प्रसिद्ध है। इस पवित्र स्थान से सम्बन्धित कितने ही चमत्कारी आख्यान विश्व भर में विश्रुत हैं। इस स्थान को छोडकर काश्मीरी भक्त जनता किसी अन्य शाक्त धाम को उतना चमत्कारपूर्ण तथा सिद्धिदायक नहीं समझती थी जितना कि इस परमरहस्यमय शाक्तधाम को, ब्रह्माण्डपुराण, योगवासिष्ठ तथा भृङ्गीश संहिता आदि में इस स्थान का विशिष्ट तथा प्रखर वर्णन पाया जाता है। कामकला स्वातन्त्र्यशक्ति श्री-राजराजेश्वरी की महिमा देशभर में विख्यात थी जिसका प्रभाव अब तक हिन्दू जनता में अक्षुण्णरूप से ज्यों का त्यों पाया जाता है, यही कारण है तीन बार यहां यवन शासकों की द्वारा प्रवर्तित नभटुब योजना (मुहिम) सफल न होने पाई जिसके मूल में आद्या शक्ति भगवती की अनुग्रह शक्ति है सुना जाता है विना किसी भेदभाव एवं अन्तर के काश्मीरी जनता श्रीराजराजेश्वरी देवी को आदरभाव एवं भक्तिभावना से देखते थे। यही कारण है यहां के मुसलमान लोग हारब्रार के नाम से इसे पूजकर मान्यता की दृष्टि से देखते थे तथा विशिष्ट एवं प्रियशपथ के अवसर पर सबको सहज में इसकी याद आती थी तथा कोई भी व्यक्ति चाहे वह किसी भी सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखता हो इस स्थान को आदर की दृष्टि से देखता था सुलतान फतह शाह के राज्यकाल में जब

मीर शम्सदीन ईराकी शियामत के प्रचार के सम्बन्ध में यहां आये तो उन्होंने विशेषरूप से इस स्थान की महिमा गाते हुए प्राय: विर्धमी मुसलमानों को पाया था तथा एक घुडसवार को श्रीपीठ की ओर सिजदा देते हुए देखकर उसने विचारा नभट्टुब योजना के सफल हो जाने पर भी ब्रह्मणों का भक्ति धर्म यहां पूर्णरूप से पनपचुका है मुस्लिम काश्मीर होने पर भी ब्रह्मणत्व किसी न किसी रूप में यहां पर उपलब्ध होता है। अतः सिजदा देने वाले के नाम तत्काल कत्ल का सज़ा जारी हुआ साथ ही शाही फर्मान से मन्दिर तथा श्रीपीठ को ढहाने का हुकम जारी किया गया। फलस्वरूप काश्मीर नरेश श्रीनाज्जुक शाह के शासन काल में श्रीपीठ को ढहाकर नष्टभ्रष्ट किया गया। अब प्रायः ४०० वर्षों के अनन्तर काश्मीरी हिन्दु जनता के अदम्य, एव उत्कट साहस और तीव्र उद्योग के कारण इस पुरातन शाक्त धाम (पीठ) पर पुनः मन्दिर का निर्माण किया गया। इसके विषय में श्रीराजराजेश्वरी जगदम्बिका की प्रेरणा ही काश्मीरी जनता के उद्यम का मूल-कारण है।

(श्रीचक्र का स्वरूप)

श्रीचक्र का आरम्भ योनिचक्र से हुआ है जिसका मूल स्वरूप त्रिकोण होता है और जिसका मूलस्वरूप एम ▽ बीज से होता है कइयों का विचार है यहां पर मातृकाओं ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेश्वरी, कौमारी आदि की रेखाएं स्वतः स्वयंसिद्ध आधारशिला पर प्रादुर्भूत होती है तथा अब भी कभी २ पंदा होती हैं यह तीन रेखाएं मुख्यतया इच्छा, ज्ञान, क्रिया, परा, पश्यन्ती, मध्यमा, भू भुवः स्वर उदात्त, अनुदात्त, स्वरित्त तथा इडा पिङ्गला, सुषुम्णा, पदत्रयी एवं परा, अपरा तथा

C W King

परापरा आदि के त्रित्व का प्रतीक है यह ही आद्या शक्ति त्रिपुरसुन्दरी त्रिजगन्नायिका का स्वरूप है। इसी प्रकार से श्रीचक्र के अन्तर्गत वसुकोण, दशकोण, षोडशकोण की भी अपनी २ अलग परिभाषाएं हैं।

> बिन्दुत्रिकोण वसुकोण दशारयुग्मम-
> न्वश्रनागदलसंयुतषोडशारम् ।
> वृत्तत्रयञ्च धरणीसदनत्रयञ्च
> श्रीचक्रराजमुदितं परदेवतायाः ॥

यह सर्वसम्मत सिद्धान्त है कि काश्मीर शक्ति धामों से एक मुख्यतम पीठ है तथा तान्त्रिक उपासना का आधार एवं त्रिकोण का आश्रय श्रीयन्त्र अथवा श्रीचक्र ही है और इसी में शाक्त उपासना होती है। भारतवर्ष के शीर्षस्थान पर काश्मीर की सत्ता है अतएव अन्यान्य शक्ति पीठों की अपेक्षा से इस देश का महात्म्य ऋषिप्रणीत ग्रन्थों में वर्णनातीत कहा है। यही कारण है यहां पर स्थान २ पर माता शक्ति के विकास का आविर्भाव हुआ है श्रीचक्र का ही नामान्तर मातृकाचक्र है क्योंकि इसका साक्षात सम्बन्ध ब्राह्मी, वैष्णवी, रौद्री, आदि मातृकाओं एवं योगिनियों से हैं। इस यन्त्र में प्रायः तीन अथवा चारवर्णों (रंगों) का उपयोग होता था जिनमें सफेद, पीला लाल और श्याम वर्ण सम्मिलित है इनमें से श्वेत और पीत सत्त्वप्रधान ब्राह्मी शक्ति का प्रतीक है एवं रजःप्रधान रक्तवर्ण वैष्णवी शक्ति का द्योतक है तथा तमः प्रधान श्यामवर्ण (नीलवर्ण) रौद्री शक्ति का ज्ञापक है पर स्मरण रहे काश्मीरियों ने रजोगुण प्रधान रक्तवर्ण को

हीं प्रधानता दी है अतः जहां तहां तेज के प्रतीकभूत सिन्दूर तथा लाख से लिप्त देव देवी की प्रतिमाएं पायी जाती हैं मातृका चक्र का आधार स्वरूप कुलग्राम तहसील के अन्तर्गत मातृका-ग्राम के समीप (वर्तमान मात्रगोम, अथवा मित्रगोम) अक्कहार के आस पास मातृका चक्र की आधारशिला चक्रोपल (आधुनिक चकपल है) अर्थात एक विशाल चट्टान है।

राजतरंगिणी वर्णनानुसार आजकल भी उक्त चट्टान पर योगिनियों के पदचिह्न मिलते हैं और जो कभी २ शाक्त-पूजा के अवसर पर कश्मीर नरेशों के प्रयोग तथा अनुष्ठान पर उपयोग में आती थी आरम्भ में ही हम लिख चुके हैं कि योनिचक्र ही ▽ मुख्यतया श्रीचक्र का स्वरूप है बिन्दु ही एकमात्र इसका मुख्यबीज है इसमें तीन ∴ बिन्दु प्रयुक्त होते हैं जो क्रमशः पूर्णाहन्ता, परमशिव तथा जडाजड विश्व के ज्ञापक है यह तीन बिन्दु ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय, सूर्य, चन्द्र, वह्नि, हरि, हर, हिरण्यगर्भ इच्छा, ज्ञान, क्रिया, सत्त्व, रज, तम, मन, बुद्धि, अहंकार आदि के प्रतीक माने जाते हैं यह ही प्रकाश विमर्श अथवा विसर्ग से अभि-प्रेत हैं बिन्दुरूप प्रकाश ही अन्तर्मुख अनुसार स्वरूप 'अहम्' है वह ही बहिर्मुखावस्था में विमर्शस्वरूप, होता है वास्तव में विमर्श ही विसर्गस्वरूप होता है यही बिन्दुत्रय राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी त्रिजन्नायिका का दिव्यस्वरूप है कन्या कुमारी द्वीप का स्वरूप मूलतः त्रिकोण ही है एवं समस्त विश्व का स्वरूप त्रिकोण तथा नवकोणात्मक है यही अन्तर्मुख बिन्दुस्वरूप प्रकाश का विसर्ग विमर्शरूप है अर्थात विश्वाकार में बहिर्मुख रूप है इसी प्रकार वसुकोण दशकोण चतुष्कोण, (चतुर्दल) अष्टदल षोडशदल वृत्तत्रय तथा भू पर चक्र है

परापरा आदि के त्रित्व का प्रतीक है यह ही आद्या शक्ति त्रिपुरसुन्दरी त्रिजगन्नायिका का स्वरूप है। इसी प्रकार से श्रीचक्र के अन्तर्गत वसुकोण, दशकोण, षोडशकोण की भी अपनी २ अलग परिभाषाएं हैं।

बिन्दुत्रिकोण वसुकोण दशारयुग्मम-
न्वश्रनागदलसंयुतषोडशारम् ।
वृत्तत्रयञ्च धरणीसदनत्रयञ्च
श्रीचक्रराजमुदितं परदेवतायाः ॥

यह सर्वसम्मत सिद्धान्त है कि काश्मीर शक्ति धामों मे एक मुख्यतम पीठ है तथा तान्त्रिक उपासना का आधार एवं त्रिकोण का आश्रय श्रीयन्त्र अथवा श्रीचक्र ही है और इसी में शाक्त उपासना होती है। भारतवर्ष के शीर्षस्थान पर काश्मीर की सत्ता है अतएव अन्यान्य शक्ति पीठों की अपेक्षा से इस देश का महात्म्य ऋषिप्रणीत ग्रन्थों में वर्णनातीत कहा है। यही कारण है यहां पर स्थान २ पर माता शक्ति के विकास का आविर्भाव हुआ है श्रीचक्र का ही नामान्तर मातृकाचक्र है क्योंकि इसका साक्षात सम्बन्ध ब्राह्मी, वैष्णवी, रौद्री, आदि मातृकाओं एवं योगिनियों से हैं। इस यन्त्र में प्रायः तीन अथवा चारवर्णों (रंगों) का उपयोग होता था जिनमें सफेद, पीला लाल और श्याम वर्ण सम्मिलित है इनमें से श्वेत और पीत सत्त्वप्रधान ब्राह्मी शक्ति का प्रतीक है एवं रजःप्रधान रक्तवर्ण वैष्णवी शक्ति का द्योतक है तथा तमः प्रधान श्यामवर्ण (नीलवर्ण) रौद्री शक्ति का ज्ञापक है पर स्मरण रहे काश्मीरियों ने रजोगुण प्रधान रक्तवर्ण को

हीं प्रधानता दी है अतः जहां तहां तेज के प्रतीकभूत सिन्दूर तथा लाख से लिप्त देव देवी की प्रतिमाएं पायी जाती हैं मातृका चक्र का आधार स्वरूप कुलग्राम तहसील के अन्तर्गत मातृका-ग्राम के समीप (वर्तमान मात्रगोम, अथवा मित्रगोम) अक्कहार के आस पास मातृका चक्र की आधारशिला चक्रोपल (आधुनिक चकपल है) अर्थात एक विशाल चट्टान है।

राजतरंगिणी वर्णनानुसार आजकल भी उक्त चट्टान पर योगिनियों के पदचिह्न मिलते हैं और जो कभी २ शाक्त-पूजा के अवसर पर कश्मीर नरेशों के प्रयोग तथा अनुष्ठान पर उपयोग में आती थी आरम्भ में ही हम लिख चुके हैं कि योनिचक्र ही ▽ मुख्यतया श्रीचक्र का स्वरूप है बिन्दु ही एकमात्र इसका मुख्यबीज है इसमें तीन ∴ बिन्दु प्रयुक्त होते हैं जो क्रमशः पूर्णाहन्ता, परमशिव तथा जडाजड विश्व के ज्ञापक है यह तीन बिन्दु ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय, सूर्य, चन्द्र, वह्नि, हरि, हर, हिरण्यगर्भ इच्छा, ज्ञान, क्रिया, सत्त्व, रज, तम, मन, बुद्धि, अहंकार आदि के प्रतीक माने जाते हैं यह ही प्रकाश विमर्श अथवा विसर्ग से अभि-प्रेत हैं बिन्दुरूप प्रकाश ही अन्तर्मुख अनुसार स्वरूप 'अहम्' है वह ही बहिर्मुखावस्था में विमर्शस्वरूप, होता है वास्तव में विमर्श ही विसर्गस्वरूप होता है यही बिन्दुत्रय राजराजे-श्वरी त्रिपुरसुन्दरी त्रिजन्नायिका का दिव्यस्वरूप है कन्या कुमारी द्वीप का स्वरूप मूलतः त्रिकोण ही है एवं समस्त विश्व का स्वरूप त्रिकोण तथा नवकोणात्मक है यही अन्तर्मुख बिन्दुस्वरूप प्रकाश का विसर्ग विमर्शरूप है अर्थात विश्वाकार में बहिर्मुख रूप है इसी प्रकार वसुकोण दशकोण चतुष्कोण, (चतुर्दल) अष्टदल षोडशदल वृत्तत्रय तथा भू पर चक्र है

इनमें से अष्टार चक्र रचना से अभिप्राय है पुर्यष्टक तथा आठ योगिनियों से पुर्यष्टक में मन, बुद्धि, अहंकार तथा पञ्च-तन्मात्राएं अन्तर्गत होते हैं अथवा मन बुद्धि, अहंकार तथा पञ्चतन्मात्राएं पुर्यष्टक कहलाता है एवं वशिन्यादि आठ से तथा ब्राह्मी, माहेशी, वष्णवी, कौमारी, वाराही, ऐन्द्री, चामुण्डा, महालक्ष्मी मातृकाए विवक्षित हैं दशकोण से अन्तर्दशार और बहिर्दशारयुग्म विवक्षित है अन्तर्दशार में पूर्वोक्त पुर्यष्टक तथा कामेश्वर तथा कामेश्वरी रूप दो तेज अपेक्षित हैं एवं दशमहाविद्याएं तथा दश महातत्त्व भी अपेक्षित होते हैं और इसका स्वरूप सर्वज्ञा आदि दश देवताओं के रूप में होता है वहिर्दशार से ज्ञानेन्द्रिय ५ तथा कर्मेन्द्रिय ५ अभिप्रेत हैं चतुर्दश कोण में दस इन्द्रियां मन, बुद्धि, चित्त और अन्तः-करण चतुष्टय के साथ चौदह कोण होते हैं इसी प्रकार से इसमें चतुर्दश स्वर विवक्षित हैं जो अ से लेकर औ पर्यन्त १२ मात्राएं तथा ह्रस्व दीर्घ मिलाकर चौदाह मात्राएं होती हैं एवं आद्या दस विद्याए उपर्युक्त मनस्तत्त्व बुद्धितत्त्व अहंकार और चित्त के समेत चौदह कोण बनते हैं।

षोडश दलों का निम्नलिखित तत्त्वों से अभिप्राय है १ मन २ बुद्धि ३ अहंकार ४ शब्द, ५ स्पर्श ६ रूप ७ रस ८ गन्ध ९ चित्त १० धैर्य ११ स्मृति १२ नाम १३ वार्धक्य १४ सूक्ष्म शरीर १५ जीवन १६ स्थूल शरीर, इसके अतिरिक्त तान्त्रिक पक्ष में इन सब चक्रों की अलग २ अधिष्ठाता स्वरूप देवताएं भी नियत हैं अन्तिम चक्र भू पर है जिसका बाहरी रेखाओं से सम्बन्ध है इनके दलों में तान्त्रिक क्रम से सम्पूर्ण वर्णमाला के अक्षर क्रम तथा व्युत्क्रम से सन्निविष्ट होते हैं

भू चक्र ही अन्तिम है इन नव चक्रों के नाम और वर्ण क्रमानुसार नीचे लिखे जाते हैं ।—

१ सर्वानन्दमय (केन्द्रस्थ रक्तबिन्दु)
२ सर्वसिद्धिप्रद (पीले रंग का त्रिकोण)
३ सर्वरक्षाकर (हरे रंग का ८ त्रिकोण)
४ सर्वरोगहर (काले रंग का १० त्रिकोण)
५ सर्वार्थसाधक (लाल रंग के १० त्रिकोण)
६ सर्वसौभाग्यदायक (नीले रंग के १४ त्रिकोण)
७ सर्वसंक्षोभण (गुलाबी रंग के आठ दलों का कमल)
८ सर्वाशापरिपूरक (पीले रंग के सोलह दलों का कमल)
९ त्रैलोक्यमोहन (बाहरी तीन रेखाएं)

वर्णविन्यास का क्रम काम कला विलास तन्त्र के आधार पर लिखा है, प्राचीन समय में ताम्रपट पर श्रीयन्त्र को उत्कीर्ण कर (खोदकर) लिखा जाता था जो पवित्रता की दृष्टि से अत्युत्तम समझा जाता था तथा फलदायक भी होता था चारों धामों में जो आद्य शंकराचार्य द्वारा प्रतिष्ठापित थे श्रीचक्रों के सौम्य यन्त्र उपलब्ध होते हैं जिन में से शृङ्गेरी (मैसूर) में अत्युत्तम श्रीयन्त्र मिलता है एवं गढवाल में ओजस्वी तथा रहस्यमय श्रीपीठ था जहां श्रीयन्त्र के कारण एक अन्य श्रीनगर भी है।

श्रीचक्र में प्रथम बिन्दुचक्र की अधिष्ठात्री देवता ललिता अथवा त्रिपुरसुन्दरी है जिसका स्वरूप केवल बिन्दु से बनता है। दूसरे त्रिकोण चक्र की अधिष्ठात्री देवता त्रिपुराम्बा है तीसरे अष्टकोण (अष्टार) की अधिष्ठात्री देवी है त्रिपुरसिद्धा इसी प्रकार से अन्तर्दशाररूप चतुर्थ तथा बहिर्दशाररूप पंचम चक्र की स्वामिनी त्रिपुरमालिनी तथा त्रिपुरा श्री है छटे

चतुर्दशार चक्र की अधिष्ठात्री त्रिपुरवासिनी है। सातवें अष्ट-दल एवं आठवें षोडशदल की अधिष्ठात्री क्रमशः त्रिपु सुन्दरी तथा त्रिपुरेशी हैं नवम भूपुरचक्र की (जो बिन्दु त्रिकोण अष्ट-दल षोडशदल स्वरूप चतुरस्र है बिन्दु त्रिकोण को छोडकर सहस्रार स्वरूप शून्यचक्र से आधारचक्र पर्यन्त इन्ही के प्रतीक माने जाते हैं। इसी चक्र की समष्टिरूप से इष्टदेवी श्री-जगदम्बा अष्टदशभुजा श्रीशारिका है, अष्टादश संख्या अठारह विद्याओं के बोधक हैं एवं दस इन्द्रियां पंच महाभूत प्रकृति मन, बुद्धि तत्त्व से अठारह 'बनते हैं जो देवी के भुजाओं के सूचक प्रतीत होते हैं एवं मौलिक अठारह तत्त्वों के ज्ञापक है जिनका स्फार ३६ तत्त्वों से होता है। शैवशास्त्र के विद्वान इनकी परिभाषा इस प्रकार से देते है इच्छा, ज्ञान, क्रिया, जो तीन मुख्य शक्तिया शैव दर्शन की हैं इनमें से इच्छा शक्ति में तीनों शक्तियों का समावेश होता है इसी प्रकार से ज्ञान तथा क्रिया शक्ति में स्वतः यह तीन २ शक्तियां समाविष्ट होती हैं और इस तरह से इनकी संख्या ९ बनती हैं जो सूक्ष्म तथा स्थूलरूप से भी दो प्रकार होती है इस तरह इनकी संख्या १८ होती हैं जो मूलतः अठारह भुजों के प्रतीक हैं प्रधानतया काश्मीर में शैवदर्शन का सार्वत्रिक प्रचार था अतः इस दृष्टि से उनका यह मत युक्तियुक्त प्रतीत होता है। वर्णविन्यासक्रम का श्रीचक्र के चित्र में स्पष्टीकरण किया जायेगा जो आगामिनी आषाढ नवमी को एक पुस्तिका के रूप में भक्तजनता की सेवा में भेंट की जायेगी।

ओं शान्ति शान्तिः शान्तिः।

चक्रेश्वर संस्था
शारिका पर्वत श्रीनगर

दीना नाथ शास्त्री (राजबाग)
जिया लाल नगरी।

॥ अथ गणेशस्तोत्रम् ॥

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये । अभिप्रेतार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरैरपि सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः । गणानामधिपश्चण्डो गजवक्त्रस्त्रिलोचनः प्रसन्नो भवतान्नित्यं वरदाता विनायकः । सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः लम्बोदरश्च विकटो विघ्नराजो विनायकः । धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः द्वादशैतानि नामानि गणेशस्य समाहितः । यः पठेत् शिवोक्तानि स लभेत्सिद्धिमुत्तमाम् विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ ओं ॥ चिदचित्पदगम्भीरं गमागमपदोज्झितम् गहनाकाशसंकाशं वन्दे देवं गणेश्वरम् । श्रीसनत्कुमार उवाच । शङ्कराद्ब्रह्मणा प्राप्तं पद्मयोनेर्मया प्रभोः तदहं कीर्तयिष्यामि स्तोत्रं परमदुर्लभम् । षष्ठ्यां चतुर्थ्यामष्टम्यां चतुर्दश्यां च भक्तितः पूजयेच्च गणाध्यक्षं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः । अर्घैः पुष्पैस्तथा धूपैर्दीपैर्माल्यैश्च चामरैः वस्त्रैः कुण्डलकेयूरैर्मौलिभिश्च वितानकैः । भक्ष्यैर्भोज्यैरपूपैश्च

मत्स्यैर्मांसैश्च मोदकैः पानकैः फलमूलैश्च होमैर्मन्त्रादिभिस्तथा । गङ्गाह्रदे तु गाङ्गेयं श्रीशैले तु गणेश्वरम् वाराणस्यां गजमुखं गयायां टङ्कधारिणम् । प्रयागे तु गणाध्यक्षं केदारे विकटाननम् लम्बोदरं कुरुक्षेत्रे नैमिषे च मदोत्कटम् । जम्बकं दण्डकारण्ये लोकेशं हिमवद्गिरौ विष्वक्सेनं च विन्ध्याद्रौ मलये हेमकुम्भकम् । नायकं पुष्करद्वीपे विघ्नेशं शल्मलौ स्थितम् इलावृते विश्वरूपं हरिवर्षे घटोदरम् । त्रिनेत्रं सिंहलद्वीपे श्वेतद्वीपे तु वामनम् उज्जयिन्यां तु लम्बोष्ठं मालवे शूर्पकर्णकम् ॥ सौराष्ट्रे वरदं नित्यं काश्मीरे भीमरूपिणम् सिन्धुसागरयोर्मध्ये विज्ञेयं मन्त्रनायकम् । हर्यक्षं यक्षभवने कैलासे परमेश्वरम् महोदर तु लुम्पायां चम्पायां शिखिवाहनम । पाशहस्तं त्रिकूटेषु पूजयेत्सर्वसिद्धिदम् बलमग्निगुहायां तु पाटले सिंहवाहनम् । पौण्ड्रे रौद्रमुखं चापि कलापिग्रामके जयम् । मेरुपृष्ठे कामरूपं नन्दनं नन्दने वने ॥ विजयं वै गन्धवने देवदारुवने गणम् आर्तानां विघ्नहरणं गङ्गासागरसङ्गमे ॥ महापथे विरूपाक्षं चित्रसेनं तु पुष्करे दुर्जयं यमुनातीरे स्तम्भनं गन्धमादने ॥ अम्बरीषं भद्रवटे मोहनं हस्तिनःपुरे । किष्किन्धायामुग्रकेतुं लङ्कायां तु विभीषणम । कलिङ्गे वरुणं चैव विन्ध्यपादे मदोत्कटम् अश्वत्थं च तुरुष्केषु चीनेषु त्रिशिखायुधम्॥ वज्रहस्तं कोसलेषु दाक्षिणात्येषु लोहितम् शूलोद्धतकरं चैव मध्यदेशे प्रकीर्तितम् । एकदंष्ट्रं पश्चिमाद्रौ पूर्वदेशेऽपराजतम् उतरे चारुवक्त्रं च वरिष्ठं त्रिपुरेषु च ॥ हिरण्यकवचं चैव गिरिसन्धिषु संस्थितम् सुमुखं नागरन्ध्रेषु नर्मदायां च षड्भुजम् ॥

मायापुर्यां महामायं भद्रकर्णह्रदे शिवम् गोकर्णे गजकर्णं च कान्यकुब्जे वराननम् ॥ पद्मासनं कामरूपे श्रीमुखं सर्वतः स्थितम् वेद-वेदाङ्गशास्त्रेषु चिन्तयेद्गणनायकम् । अष्टाषष्टिस्तु नामानि स्तुतान्यद्भुतकर्मणः नित्यं प्रभातकाले तु चिन्तयेत्सर्वसिद्धिदम् । एतत्स्तोत्रं पवित्रं तु मङ्गलं पापनाशनम् । शस्त्रखर्गोदवेतालयक्षरक्षोभयापहम् । चौरारण्यभयव्याघ्रव्याधिदुर्भिक्षनाशनम् । कृत्यादिमायाशमनं सर्वशत्रुविमर्दनम् । त्रिसन्ध्यं यः पठेदेतत्स भवेत्सर्वसिद्धिभाक् गणेश्वरप्रसादेन लभते शाङ्करं पदम् ॥ इत्यादिपुराणे श्री गणेशस्तोत्रम् ॥

ॐ लाक्षासिन्दूरवर्णं सुरवरनमितं मोदकैर्मोदितास्यं हस्ते दन्तं दन्तं दधानं हिमकरसदृशं तेजसोग्रं त्रिनेत्रम् दक्षे रत्नाक्षसूत्रं वरपरशुवरं साखुसिंहासनस्थं गांगेयं रौद्रमूर्तिं त्रिपुरवधकरं विघ्नभक्षं नमामि । गौरीपुत्रं त्रिनेत्रं गजमुखसहितं नागयज्ञोपवीतं पद्माक्षं सर्वभक्षं सकलजनप्रियं सर्वगन्धर्वपूज्यम् संपूर्णं भालचन्द्रं वरदमतिबलं हन्तृकं चासुराणां हेरम्बमादिदेवं गणपतिममलं सिद्धिदातारमीडे ॥ यं ब्रह्मवेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशकाय । गजवदनमचिन्त्यं तीक्ष्णदन्तं त्रिनेत्रं बृहदुदरमनन्तं दन्तमाले दधानम् परशुचषकपद्मद्वन्द्वहस्तारविन्दं हरियुगलनिविष्टं श्रीगणेशं भजामि । अभयवरदपाणिं लड्डुपात्रं सुदन्तं नरपतिजपमालां नागपाशाङ्कुशं च कनकमयविचित्रं मुद्गरं पाणिपद्मे परशुमपि वहन्तं विघ्नराजं नमामि ॥

विघ्नेशं विश्ववन्द्यं सुविपुलयशसं लोकरक्षाप्रदक्षं साक्षात्सर्वापदासु प्रशमनसुमतिं पार्वतीप्राणसूनुम् प्रायः सर्वासुरेन्द्रैः ससुरमुनिगणैः साधकैः पूज्यमानं कारुण्येनान्तरायामितभयशमनं विघ्नराजं नमामि। उच्चैर्ब्रह्माण्डखण्डद्वितयसहचरं कुम्भयुग्मं दधानः प्रेङ्खन्नागारिपक्ष-प्रतिभटविकटश्रोत्रतालाभिरामः देव्याः शम्भोरपत्यं भुजगपतितनु-स्पर्धिवर्धिष्णुहस्तस्त्रैलोक्याश्चर्यमूर्तिः स भवतु सततं भूतये कुञ्जरास्यः। नमो नमो गजेन्द्राय एकदन्तधराय च नम ईश्वरपुत्राय गणेशाय नमो नमः। माता यस्य उमादेवी पिता यस्य महेश्वरः मूषको वाहनं यस्य स नः पायाद्गणाधिपः। वन्दे वराभयपिनाक-कपालखड्गखट्वाङ्गदन्तमुसलाब्जकरं त्रिनेत्रम् भीमं जटामुकुटिनं कमलासनस्थं कश्मीरवासममलं गणराजमाद्यम्। रक्ताङ्गरागं परश्व-क्षमालासुदन्तपाणिं सितलड्डुपात्रम् गजाननं सिंहरथाधिरूढं गणेश्वरं विघ्नहरं नमामि। संसिद्ध्यर्थनमत्सुरासुरमिलन्मौलिस्थितप्रोल्लसत्स-द्रत्नप्रभवप्रकृष्टिचिभवप्रेङ्खन्मयूखोज्ज्वलत्। श्रेयो विघ्नमहाभयप्रशमने दिव्यं यदेकौषधं भूयान्नो द्विरदाननाङ्घ्रिकमलद्वन्द्वं तदिष्टाप्तये। बिभ्रत्पञ्चमुखानि योयमुदितः स्वातन्त्र्यमात्रात्मना शक्तेर्वैभवतः पर-प्रतिहतद्वैताख्यविघ्नव्ययः एकीभूतमुखः सकारणगणानुकारिणा तेजसा देवः संप्रति भासतां मयि यथा तत्वं गणाधीश्वरः॥ हस्तीन्द्राननमिन्दुचूडमरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसादाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया स्वाङ्कस्थया सन्ततम्। बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखयुक्चक्राब्जपाशोत्पल-

त्रीह्यग्रस्थविषाणरत्नकलशान् हस्तैर्वहन्तं भजे। देवं स्थूलतनुं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरं विघ्नेशं मदगन्धलोलमधुपव्यालोलगण्डस्थलम्। दन्ताघातविदारिताहितजनं सिन्दूरशोभाकरं वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम्॥ द्विचतुर्दशवर्णभूषिताङ्गं मुसलाम्भोजधरं महोपवीतम् द्विमृगाधिपगामिनं त्रिनेत्रं हरपुत्रं द्विरदाननं भजेऽहम्। जटामुकुटमण्डितं त्रिनयनं भजे षड्भुजं सतीसरन्निशासिनमसुरनाशनं लोहितम् वराभयपिनाकिनं स्वसिकपालभृच्छूलिनं गणैर्वृतगणेश्वरं कमलगं च भीमाकृतिम्॥ गजाननं भूतगणाधिसेवितं कपित्थजाम्बूफलसारभक्षणम्। उमासुतः शोकविनाशकारणं नमामि विश्वेश्वरमाशुसिद्धिदम्॥ लम्बोदरैकवदनः कमलासनस्थश्चन्द्रार्धमौलिरमलो भुजगेन्द्रहारः। भीमोऽष्टबाहुरुदितार्कमरीचिरष्टसिद्धिप्रदो भवतु वाञ्छितसिद्धिदो नः॥ योऽभ्यर्चितः सुरगणैर्वरसिद्धिहेतोश्छेत्तु भयानि च करे परशुं दधानः। देवः स शम्भुदयितापरिवर्धितश्रीर्विघ्नान्निवारयतु वारणराजवक्त्रः॥ श्रीगणेशाय नमः॥ बिभ्रद्दक्षिणहस्तपद्मयुगले दन्ताक्षसूत्रे शुभे वामे मोदकपूर्णपात्रपरशू नागोरगीती त्रिदृक् श्रीमान्सिंहयुगासनः श्रुतियुगे शङ्खौ वहन्मौलिमान्दिश्यादीश्वरपुत्र एष भगवांल्लम्बोदरः शर्म नः॥

॥ अथ देवाध्यानरत्नमाला स्तुति ॥

ॐनमो भवान्यै॥ भक्तानुग्रहकारिणी भगवती देवाधिदेवेश्वरी दीनानाथकृपावती स्वजननी भक्तानुरक्ता सती। ॐकाराक्षरवासिनी

सुरनुता सर्वेश्वरी सर्वदा भूयान्नो वरदा सदा ह्यभयदा कामेश्वरी कामदा ॥ वराङ्कुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम् । बालार्ककोटिप्रतिभां त्रिनेत्रां भजेहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम् ॥ माता भवानी च पिता भवानी बन्धुर्भवानी च गुरुर्भवानी । विद्या भवानी द्रविणं भवानी यतो यतो यामि ततो भवानी ॥ श्रीशङ्खचक्रमुसलाम्बुजयुग्महस्तां नागेन्द्रहारवलयाङ्कितकण्ठमालाम् । सिन्दूरकुङ्कुमसहस्रमरीचिदीप्तां श्रीशारिकां त्रिनयनां हृदये स्मरामि ॥ बालार्ककोटिद्युतिमिन्दुचूडां वरासिचक्राभयबाहुमाद्याम् । सिंहाधिरूढां शिववामदेहलीनां भजे चेतसि शारिकेशीम ॥ या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या श्वेतपद्मासना या वीणावरदण्डमण्डितकरा या शुभ्रवस्त्रान्विता । या ब्रह्माच्युतशङ्करप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥ या श्रीर्वेदमुखी तपःफलमुखी नित्यं च निद्रामुखी नानारूपधरी सदा जयकरी विद्याधरी शंकरी । गौरी पीनपयोधरी रिपुहरी मालास्थिमालाधरी सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥ या देवी शिवकेशवादिजननी या वै जगद्रूपिणी या ब्रह्मादिपिपीलिकान्तजनतानन्दैकसंदायिनी । या पञ्चप्रणमन्निलिम्पनयनी या चित्कलामालिनी सा पायात्परदेवता भगवती श्रीराजराजेश्वरी ॥ या माया मधुकैटभप्रमथिनी या माहिषोन्मूलिनी या धूम्रेक्षणचण्डमुण्डमथिनी या रक्तबीजाशनी । शक्तिः शुम्भनिशुम्भदैत्यदलिनी या सिद्धलक्ष्मीः परा सा देवी नवकोटिमूर्त्तिसहिता मां पातु माहेश्वरी ॥ या खड्ग डमरु

त्रिशूलपरशू खट्वाङ्गपाशौ गदां चक्रं मुद्‌गरचापबाणवरदाभीतीः कपालाङ्कुशौ । धत्ते तोमरपुस्तके च मुसुलं दोर्भिर्दशात्ताष्टभिर्देवीभिः परिवारिता शशिधरा सा शारिका पातु नः ॥ बीजैः सप्तभिरुज्ज्वलाकृतिरसौ या सप्तसप्तिद्युतिः सप्तर्षिप्रणताङ्घ्रिपङ्कजयुगा या सप्तलोकार्तिहृत् । कश्मीरप्रवरेशमध्यनगरीप्रद्युम्नपीठे स्थिता देवीसप्तकसंयुता भगवती श्रीशारिका पातु नः ॥ ब्रह्माणं च पुरन्दरं शिवहरी देवान्समस्तान्मुनीन् या दृष्ट्या दयया विलोकयति सा देव्यम्बिका पार्वती । चक्रस्था निजबोधभासितजगच्छान्तात्मिका सर्वगा सान्द्रानन्दप्रदा परा भगवती पायात्सदा शारिका ॥ भक्तानां सिद्धिदात्री नलिनयुगकरा श्वेतपद्मासनस्था लक्ष्मीरूपा त्रिनेत्रा हिमकरवदना सर्वदैत्येन्द्रहर्त्री । वागीशी सिद्धिकर्त्री सकलमुनिजनैः सेविता या भवानी नौम्यहं नौम्यहं त्वां हरिहरप्रणतां शारिकां नौमि नौमि ॥ आरक्ताभां त्रिनेत्रां मणिमुकुटवतीं रत्नताटङ्करम्यां हस्ताम्भोजैः सपाशाङ्कुशमदनधनुःसायकैर्विस्फुरन्तीम् । आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहतटविलुठत्तारहारोज्ज्वलाङ्गीं ध्यायाम्यम्भोरुहस्थामरुणविवसनामीश्वरीमीश्वराणाम् ॥ ज्वालापर्वतसंस्थितां त्रिनयनां पीठत्रयाधिष्ठितां ज्वालाडम्बरभूषितां सुवदनां नित्यामदयां जनैः । षट्चक्राम्बुजमध्यगां वरगदाम्भोजाभयान्बिभ्रतीं चिद्रूपां सकलार्थदीपनकरीं ज्वालामुखीं नौम्यहम् ॥ संसारार्णवतारिणीं रविशशिकोटिप्रभां सुप्रभां पापातङ्कनिवारिणीं हरिहरब्रह्मादिभिः संस्तुताम् । दारिद्र्यस्य (दाद्र्यस्य) विनाशिनीं सुकृतिनां जाड्यं हरन्तीं भृशमज्ञानान्धमतेः कवित्वजननीं ज्वाला-

मुखीं नौम्यहम् ॥ सैन्यानां महिषासुरस्य मृतिदां सिंहाधिरूढामुमां नानाकारविशेषपोषणजननीं देहान्तरैः संस्थिताम्। बालामध्यम-वृद्धरूपरमणीं श्रीसुन्दरीं वैष्णवीं स्त्रीरूपेण जगद्विमोहनकरीं ज्वाला-मुखीं नौम्यहम् ॥ ज्वालामुखि महाज्वाले ज्वालापिङ्गललोचने। ज्वालातेजे महातेजे ज्वालामुखि नमोस्तु ते ॥ नमो भगवति ज्वाले कालि त्रिपुरसुन्दरि। सर्वबीजपालयत्रि ज्वालामुखि नमोऽस्तु ते ॥ आकाशे चण्डिका देवी पाताले भुवनेश्वरी। मर्त्यलोके जयादेवी पायात्त्रिपुरसुन्दरी ॥ श्री श्रीशैले स्थिता या प्रहसित-वदना पार्वती शूलहस्ता वह्निसूर्येन्दुनेत्रा त्रिभुवनजननी षड्-भुजा सर्वशक्तिः। शाण्डिल्येनोपनीता जयति भगवती भक्तिगम्यानु-याता सा नः सिंहासनस्था ह्यभिमतफलदा शारदा शं करोतु ॥ मूलाधाराद्भुतवहकलामिश्रितं भूर्भुवःस्वर्ब्रह्मस्थानात्परमगहनात्तत्स-वितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवः शशिकलमयी धीमहीत्येकरूपं धियो यो नः परममृतं चोदयान्नः परं तत् ॥ प्रातःकाले कुमारी कुमुदकलिकया जप्यमालां जपन्ती मध्याह्ने प्रौढरूपा विकसितवदना चारुनेत्रा वि-शाला। सन्ध्यायां वृद्धरूपा गलितकुचयुगे मुण्डमालां वहन्ती सा देवी दिव्यदेहा हरिहरनमिता पातु नो ह्यादिमुद्रा ॥ चतुर्भुजामर्क-सहस्रकोटिभां त्रिलोचनां हारकिरीटशोभिताम्। चतुर्मुखाङ्कोपगतां महोज्ज्वलां वेदेश्वरीं पञ्चमुखीं नमाम्यहम् ॥ पद्मासनस्थां करपङ्कजा-भ्यां रक्तोत्पले सन्दधतीं त्रिनेत्राम्। सम्बिभ्रतीमाभरणानि रक्तां पद्मावतीं पद्ममुखीं नमामि ॥ पद्मेशपद्मोद्भवपद्मबन्धुमुखाः सुराः

पादरजोपि यस्याः । चिन्वन्त आप्ता न गताश्च पारं पद्मावती सा मम सन्नगस्तात् ॥ देवीं शुद्धस्फटिकधवलां पञ्चवक्त्रां त्रिनेत्रां दोर्भिर्युक्तां दशभिरभितः शोभितां रत्नहारैः । कार्यं मुण्डं सृणिममयं सृणं शूलमच्छाच्छधारं सारात्सारं वरमनवरं दक्षहस्तैर्वहन्तीम् ॥ उत्खट्वाङ्गं कठिनविकटं टङ्कमूर्जस्वदङ्कं पाशं ज्ञानामृतरसमयं पुस्तकं चाभयं च । कामं वामैः शुभकरतलैर्बिभ्रतीं विश्ववन्द्यां पद्मां प्रेतोपरिकृतपदां सिद्धलक्ष्मीं नमामि ॥ इच्छाशक्तिप्रथमलहरीमम्बरान्तःप्रवाहगर्भीभूतां त्रिविधमुदितां पञ्चधा प्रस्फुरन्तीम् । सम्यग्देवीं स्फटिकधवलां शुद्धकुन्देन्दुवर्णां रुद्रारूढां दशभुजयुतां क्षामगात्रीं नमामि ॥ उद्यद्भास्वत्समाभां विहितरविजयां मुण्डखण्डावनद्धां ज्योतिर्मौलिं त्रिनेत्रां विविधमणिलसत्कुण्डलामण्डिताङ्गीम् । हारग्रैवेयकाञ्चीगुणमणिनिलयामेकचित्राम्बराढ्यामम्बां पाशाङ्कुशाढ्याभयवरदकरां सिद्धिदात्रीं नमामि ॥ सन्तः शंसन्त्यमुत्र त्रिजगति जगतीमण्डलं सारभूतं तत्रापि क्ष्माधरं तं त्रिभुवनजननी जन्मने यं प्रपेदे । तत्राप्याहुः शुभानां विघटितविपदां वेश्म कश्मीरदेशं त्वं तत्रानुग्रहार्थं प्रवहसि भविनामों नमस्ते वितस्ते ॥ गङ्गे त्रैलोक्यसारे सकलसुरवधूधौतविस्तीर्णतोये पुण्ये ब्रह्मस्वरूपे हरिचरणरजोहारिणि स्वर्गमार्गे । प्रायश्चित्तं परं नस्तव जलकणिका ब्रह्महत्याद्यघानां कस्त्वां स्तोतुं समर्थस्त्रिजगदघहरे देवि गङ्गे प्रसीद ॥ (दृष्टा जन्मशताधर्मं स्पृष्टा जन्मशतत्रयम् । स्नाता जन्मशतोत्थाघं हन्ति गङ्गा कलौ युगे ॥) हरतीयं महापापं गङ्गेश्वरसमुद्भवा । मातृपितृहितं गङ्गे हरि-

गङ्गे नमोस्तुते ते ॥ अन्नपूर्णे सदापूर्णे शङ्करप्राणवल्लभे । ज्ञानवैराग्य-सिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि नमोस्तु ते ॥ नमः कल्याणदे देवि नमः शङ्करवल्लभे । नमो भक्तिप्रदे देवि अन्नपूर्णे नमोऽस्तु ते ॥ नित्यानन्दकरी वराभयकरी सौन्दर्यरत्नाकरी निर्धूताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी । प्रालेयाचलवंशपावनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी मातान्नपूर्णेश्वरी ॥ उर्वी सर्वजनेश्वरी हिमवतः पुत्री कृपासागरी नारी नीलसमानकुन्तलधरी नित्यान्नदानेश्वरी । सर्वत्राणकरी सदा सुखकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी मातान्नपूर्णेश्वरी ॥ यां द्वादशार्करश्मिमण्डितमूर्तिमेकां सिंहासनस्थितिमनीमुगैर्वृतां च । देवीमनक्षगतिमीश्वरतां प्रपन्नां तां नौमि भर्गवपुषं परमार्थराज्ञीम् ॥ उद्यद्दिवाकरसहस्ररुचिं त्रिनेत्रां सिंहासनोपरिगतामुरगोपवीताम् । खड्गाम्बुजाढ्यकलशामृतपात्रहस्तां राज्ञीं भजामि विकसद्वदनारविन्दाम् ॥ यत्पादपङ्कजतलेऽमरमूर्धमौलिन्यस्तेन्द्रनीलमणिपन्ततयः पतन्ति । किञ्जल्कपानरतमुग्धमधुव्रतं त्वं राज्ञी सदा भगवती जननीव नोऽव्यात् ॥ शीतांशुबालार्ककृशानुनेत्रां चतुर्भुजामेनत्वगासनस्थाम् । शङ्खाब्जशूलासिधरां महेशीं राज्ञीं भजेहं तुहिनाद्रिरूपाम् ॥ स्मृतैवान्तर्गतं पुंसां हरन्ती सकलं मलम् । जयत्येषा महाराज्ञी भक्तानां कामदायिनी ॥ त्रिजगन्मोहिनि ईड्ये मिहिरीभूतसद्गुणे । नमोस्तु ते महाराज्ञि पाहि मां शरणागतम् ॥ शेषाशेषमुखागण्यगुणे गुणगणप्रिये । नमोस्तु ते महाराज्ञि० ॥ सुरासुरनरसिद्धवन्दनीयपदाम्बुजे । नमोस्तु ते० ॥ चराचरजगत्सृष्टिस्थिति-

संहारकारिणि । नमोस्तु ते० ॥ भक्तकल्पलतेऽनल्पवाङ्माधुर्यजितामृते । नमोस्तु ते० ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानवन्दिते गिरिनन्दिनि । नमोस्तु ते० ॥ भक्तानां भीमसंसारपारावारप्रतारिणि । नमोस्तु ते० ॥ निर्गुणे निष्क्रिये नित्ये सच्चिदानन्दरूपिणि । नमोस्तु ते० ॥ राज्ञीस्तोत्रमिदं पुण्यं त्रिसन्ध्यं प्रयतः पठेत् । असंशयमशेषेण वशयेदखिलं जगत् ॥ उद्यच्चन्द्रकलावतंसितशिखां क्लींकारवर्णोज्ज्वलां श्यामां श्याममुखीं रवीन्दुनयनां क्लींवर्णरक्ताम्बराम् । भैंबीजाङ्कितमानसां शवगतां नीलाम्बरोद्भासितां स्वाहालङ्कृतसर्वगात्रलतिकां भैंभद्रकालीं भजे ॥ श्यामां श्याममुखीं विलोलवपुषं सत्कोटराक्षीं शिवां विश्वयुतरूपिणीं मधुमदोन्मत्तां च रक्ताम्बराम् । ब्रह्ममुण्डशिवादिविष्णुरशनाहस्तामनङ्गोज्ज्वलां प्रेतस्थां हृदयाम्बुजे भगवतीं भैंभद्रकालीं भजे ॥ गौराङ्गीं धृतपङ्कजां त्रिनयनां श्वेताम्बरां सिंहगां चन्द्रोद्भासितशेखरां स्मितमुखीं धुर्यां वहन्तीं धुरम् । विष्णिवन्द्रप्रणताकृतिं च त्रिदशैः सम्पूजितांघ्रिद्वयीं गौरीं मानसपङ्कजे भगवतीं भक्तेष्टदां तां भजे ॥ ऐन्दवथा कलयाऽवतंसितशिरोविस्तारिनादात्मकं तद्रूपं जननि स्मरामि परमं सन्मात्रमेकं तव । यत्रोदेति पराभिधा भगवती भासां च तासां पदं पश्यन्तीमनु मध्यमां विहरति स्वैरं च सा वैखरी ॥ कस्मादम्ब विलम्बसे कुरु कृपां केनापि रूपेण मे जिह्वाग्रे वस सन्निधेहि हृदये वाग्देवि तुभ्यं नमः । तन्निर्यान्तु ममास्यकुहाराद्धारादिभूषातिरस्कारिण्यो रसपूरबन्धुरतया चेतो हरन्त्यो गिरः ॥ बालार्कायुतभास्वरां त्रिनयनां मन्दस्मितोद्यन्मुखीं राजच्चन्द्रकलाधरां

सुकबरीपुष्पालिवृन्दाकुलाम् । कस्तूरीतिलकां घनस्तनभरां पाशाङ्कुशावैक्षवं कोदण्डं कुसुमेषुमेव दधतीं हस्ताम्बुजैस्तां भजे ॥ सौवर्णाम्बुजमध्यगां त्रिनयनां सौदामिनीसन्निभां शंखं चक्रवराभयानि दधतीमिन्दोः कलां बिभ्रतीम् । ग्रैवेयाङ्गदहारकुण्डलधरामाखण्डलाद्यैः स्तुतां ध्यायेद्विन्ध्यनिवासिनीं शशिमुखीं पार्श्वस्थपञ्चाननाम् ॥ श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं सम्बिभ्रतीं शाश्वतीम् । मुक्ताहारलसत्पयोधरघटीं नेत्रत्रयोल्लासिनीं वन्देहं हरिपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम् ॥ वक्त्रैकेन विराजितां त्रिनयनां युग्मादिषट्त्रिंशता बाहूल्लासिमहायुधोद्यतकराम्भोजैश्च सिंहासनाम् । विश्वभुङ्महिषासुरस्य हृदयं शूलेननिर्भेदिनीं दुर्गाख्यां प्रणमामि लोकजननीं त्वां रक्तगौरद्युतिम् ॥ मातर्मे मधुकैटभोग्रमहिषप्राणापहारोद्यते । हेलानिर्मितधूम्रलोचनवधे हे चण्डमुण्डार्दिनि । निःशेषीकृतरक्तबीजदलिनि नित्यं निसुम्भापहे सुम्भध्वंसिनि संहराशु दुरितं दुर्गे नमस्तेऽम्बिके ॥ आदिक्षान्तमहर्निशं तु नदती या शब्दराशिस्तथा पश्यंतीत्युत मध्यमा खलु परा तस्याः परा वैखरी । सर्वप्राणिमयाऽखिलार्थजननी त्वेका चतुर्धा स्थिता मातः सा त्वमचिन्त्यरूपमहिमा वागीश्वरीत्युच्यसे ॥ चापं पञ्चशरान्सृणिं विषधरं दोर्भिश्चतुर्भिः सदा बिभ्रत्यद्भुतरूपरक्तविभवैरेकानना सर्वदा । देयान्नोऽद्य सदाशिवस्थविलसद्रक्ताब्जसंस्था सदा देवी श्रीत्रिपुरा पुरारिनिरता सम्यग्वरं भूतये ॥ बालामिन्दुकलावतंसितशिखां सूर्येन्दुवह्नीक्षणां मालापुस्तकचापपाशयुगलं दोर्भिर्वहन्तीं

सदा । उद्यत्सूर्यसहस्रदीप्तसदृशीं स्मेराननाम्भोरुहां ध्यायेहं त्रिपुरां परां भगवतीं त्रैलोक्यरक्षापराम् ॥ मातः श्रीत्रिपुरे परात्परतरे देवि त्रिलोकीमहासौन्दर्यार्णवमन्थनोद्भवसुधाप्राचुर्यवर्णोज्ज्वलम् । उद्यद्भानुसहस्रनूतनजपापुष्पप्रभं ते वपुः स्वान्ते मे स्फुरतु त्रिलोकनिलयं ज्योतिर्मयं वाङ्मयम् ॥ रक्ताब्धौ रत्नपोते रविदलकमलाभ्यन्तरे सन्निषण्णां रक्ताङ्गीं रत्नमौलिं स्फुरितशशिकलां स्मेरवक्त्रां त्रिनेत्राम् । बीजापूरेषुपाशांकुशमदनधनुः सत्कपालानि हस्तैर्बिभ्राणामानताङ्गीं स्तनभरभरणादम्बिकामाश्रयामः ॥ चापं पाशाङ्कुशसरसिजान्यङ्कुशं पुष्पबाणान्बिभ्राणां तां करसरसिजैरत्नमौलिं त्रिनेत्राम् । हेमाब्जाभां कुचभरनतां रत्नमञ्जीरकाञ्चीग्रैवेयाद्यैर्विलसिततनुं भावयेच्छक्तिमाद्याम् ॥ चन्द्रार्कानलकोटिनीरदरुचिं पाशाङ्कुशौचाशुगान्मुण्डं खड्गमभीतिमीश्वरवरं हस्ताम्बुजैरष्टभिः । कामेशानशिवोपरिस्थितपदां त्र्यक्षां वहन्तीं परां श्रीचिन्तामणिमन्त्रराजवपुषं ध्यायेन्महाषोडशीम् । त्र्यर्णा त्र्यश्रनिविष्टमूर्तिरधिका मुद्रात्रयोद्भासिता या धत्तेऽङ्कुशपाशबाणनिचयं चापं चतुर्भिर्भुजैः । देवीभिस्तिसृभिस्तथाष्टभिरथो दिग्दिग्मनुख्यातिभिर्वस्वष्टप्रमिताभिरष्टभिरथो जीयाज्जगन्मातृका ॥ या वह्नीन्दुदिवाकराक्षिमधुरा या रक्तपद्मासना रत्नाकल्पविराजिताङ्घ्रिलतिका बालेन्दुचूडोज्ज्वला । अक्षस्रक्सृणिपाशपुस्तककरा या बालभानुप्रभा तां वन्दे सुरसिद्धवन्दितपदामिष्टार्थसिद्ध्यै सदा ॥ रक्ताम्बरां सिंहगतां स्मितास्यां पाशाङ्कुशौ नैऋवटीं दधानाम् । विद्यां त्रिशूलं कमलं वहन्तीं ध्यायामि त्वां

देवदेवीमपर्णाम् ॥ अरुणकिरणजालैरञ्जिताशावकाशा विधृतजपवटीका पुस्तकाभीतिहस्ता । इतरकरवराढ्या फुल्लकल्हारसंस्था निवसतु हृदि बालादित्यकल्याणरूपा ॥ प्रसीद परदेवते मम हृदि प्रभूतं तमो विदारय दरिद्रतां दलय देहि सर्वज्ञताम् । विधेहि करुणानिधे चरणयोर्युगं स्वकं विदारितजरामृतिं त्रिपुरसुन्दरि श्रीशिवे ॥

॥ अथ पञ्चस्तवी ॥

अथ लघुस्तवः प्रथमः ॥

नमस्त्रिपुरसुन्दर्यै ॥ लघुस्तवः प्रथमोयमारभ्यते ॥ ॐऐन्द्रस्येव शरासनस्य दधती मध्येललाटं प्रभां, शौक्लीं कान्तिमनुष्णगोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः । एषाऽसौ त्रिपुरा हृति द्युतिरिवोष्णांशोः सदाऽहः स्थिता, छिन्द्यान्नः सहसा पदैस्त्रिभिरघं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी ॥१॥ या मात्रा त्रपुसीलतातनुलसत्तन्तूत्थितिस्पर्धिनी, वाग्बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तां मन्महे ते वयम् । शक्तिः कुण्डलिनीति विश्वजननव्यापारबद्धोद्यमा, ज्ञात्वेत्थं न पुनः स्पृशन्ति जननीगर्भेऽर्भकत्वं नराः ॥२॥ दृष्ट्वा संभ्रमकारि वस्तु सहसा ऐऐ इतिव्याहृतं, येनाऽऽकूतवशादपीह वरदे ! बिन्दुं विनाप्यक्षरम् । तस्यापि ध्रुवमेव देवि तरसा जाते तवानुग्रहे, वाचः सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात् ॥३॥ यन्नित्ये ! तव कामराजमपरं मन्त्राक्षरं निष्कलं तत्सारस्वतमित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि ।

आख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो यत्कीर्तयन्तो द्विजाः, प्रारम्भे प्रणवास्पदप्रणयितां नीत्वोच्चरन्ति स्फुटम् ॥४॥ यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधैस्तार्तीयीकमहं नमामि मनसा त्वद्बीजमिन्दुप्रभम् । अस्त्वौर्वोऽपि सरस्वतीमऽनुगतो जाड्याम्बुविच्छित्तये गोशब्दो गिरि वर्तते स नियतं योगं विना सिद्धिदः ॥५॥ एकैकं तव देवि बीजमनघं सव्यञ्जनाऽव्यञ्जनं कूटस्थं यदि वा पृथक्क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात् । यं यं कामपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिन्तितं, जप्तं वा सफलीकरोति सहसा तं तं समस्तं नृणाम् ॥६॥ वामे पुस्तकधारिणीमऽभयदां साक्षस्रजं दक्षिणे, भक्तेभ्यो वरदानपेशलककरां कर्पूरकुन्दोज्ज्वलाम् । उज्जृम्भाम्बुजपत्रकान्तनयनस्निग्धप्रभालोकिनीं ये त्वामऽम्ब न शीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ॥७॥ ये त्वां पाण्डुरपुण्डरीकपटलस्पष्टाभिरामप्रभां, सिञ्चन्तीमऽमृतद्रवैरिव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम् । अश्रान्तं विकटस्फुटाक्षरपदा निर्याति वक्त्राम्बुजात्तेषां भारति ! भारती सुरसरित्कल्लोललोलोर्मिवत् ॥८॥ ये सिन्दूरपरागपुञ्जपिहितां त्वत्तेजसा द्यामिमामुर्वीं चापि विलीनयावकरसप्रस्तारमग्नामिव । पश्यन्ति क्षणमऽप्यऽनन्यमनसस्तेषामऽनङ्गज्वरक्लान्तास्त्रस्तकुरङ्गशावकदृशो वश्या भवन्ति स्फुटम् ॥९॥ चञ्चत्काञ्चनकुण्डलाङ्गदधरामाऽऽबद्धकाञ्चीस्रजं ये त्वां चेतसि तद्गते क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थितिम् । तेषां वेश्मसु विभ्रमादऽहरहः स्फारीभवन्त्यश्चिरं माद्यत्कुञ्जरकर्णतालतरलाः स्थैर्यं भजन्ते श्रियः ॥१०॥ आर्भट्या शशिखण्ड-

मण्डितजटाजूटां नृमुण्डस्रजं, बन्धूककुसुमारुणाम्बरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम्। त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयनामाऽपीनतुङ्गस्तनीं मध्ये निम्नवलित्रयाङ्किततनुं त्वद्रूपसंवित्तये ॥११॥ जातोऽप्यऽल्पपरिच्छदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे कुले निःशेषावनिचक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः। यद्विद्याधरवृन्दवन्दितपदः श्रीवत्सराजोऽभवद्देवि! त्वच्चरणाम्बुजप्रणतिजः सोऽयं प्रसादोदयः ॥१२॥ चण्डि! त्वच्चरणाम्बुजार्चनविधौ बिल्वीदलोल्लुण्ठनत्रुट्यत्कण्टककोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः। ते दण्डाङ्कुशचक्रचापकुलिशश्रीवत्समत्स्याङ्कितैर्जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवाम्भोजप्रभैः पाणिभिः ।१३। विप्राः क्षोणिभुजो विशस्तदितरे क्षीराज्यमध्वासवैस्त्वां देवि! त्रिपुरे! पराऽपरमयीं सन्तर्प्य पूजाविधौ। यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरधियां तेषां त एव ध्रुवं तां तां सिद्धिमवाप्नुवन्ति तरसा विघ्नैरविघ्नीकृताः ॥१४॥ शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे, त्वत्तः केशववासवप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति स्फुटम्। लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेऽप्यमी सा त्वं काचिदऽचिन्त्यरूपमहिमा शक्तिः परा गीयसे ॥१५॥ देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरास्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथो त्रिब्रह्म वर्णास्त्रयः। यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मकं तत्सर्वं त्रिपुरीतिनाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः ॥१६॥ लक्ष्मीं राजकुले जयां रणभुवि क्षेमङ्करीमध्वनि क्रव्यादद्विपसर्पभाजि शवरीं कान्तारदुर्गे गिरौ। भूतप्रेतपिशाचजम्बुकभये स्मृत्वा महाभैरवीं व्यामोहे त्रिपुरां

तरन्ति विपदस्तारां च तोयप्लवे ॥१७॥ माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी। शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी ह्रींकारी त्रिपुरा पराऽपरमयी माता कुमारीत्यसि ॥१८॥ आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः काद्यैः क्षान्तगतैः स्वरादिभिरथो क्षान्तैश्च तैः सस्वरैः। नामानि त्रिपुरे! भवन्ति खलु यान्यत्यन्तगुह्यानि ते तेभ्यो भैरवपत्नि विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥१९॥ बोद्धव्या निपुणं बुधैः स्तुतिरियं कृत्वा मनस्तद्गतं भारत्यास्त्रिपुरेत्यनन्यमनसो यत्राद्यवृत्ते स्फुटम्। एकद्वित्रिपदक्रमेण कथितस्त्वत्पादसंख्याक्षरैर्मन्त्रोद्धारविधिर्विशेषसहितः सत्सम्प्रदायान्वितः ।२०। सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा किंवानया चिन्तया नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति नरो यस्यास्ति भक्तिस्त्वयि। सञ्चिन्त्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं सञ्जायमानं हठात्त्वद्भक्त्या मुखरीकृतेन रचितं यस्मान्मयापि स्फुटम् ॥२१॥ इति श्रीपञ्चस्तव्यां लघुस्तवः प्रथमः समाप्तः ॥

॥ अथ चर्चास्तवो द्वितीयः ॥

नमस्त्रिपुरसुन्दर्यै ॥ आनन्दसुन्दरपुरन्दरमुक्तमाल्यं मौलौ हठेन निहितं महिषासुरस्य। पादाम्बुजं भवतु मे विजयाय मञ्जु मञ्जीरशिञ्जितमनोहरमम्बिकायाः ॥१॥ सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्यसम्पत्तिकल्पतरवस्त्रिपुरे! जयन्ति। एते कवित्वकुमुदप्रकरावबोध-

पूर्णेन्दवस्त्वयि जगज्जननि प्रणामाः ॥२॥ देवि स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्धयस्ते वाचस्पतिप्रभृतयोपि जडीभवन्ति। तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोऽहमत्र स्तोत्रं तव त्रिपुरतापनपत्नि! कर्तुम् ॥३॥ मातस्तथापि भवतीं भवतीव्रतापविच्छित्तये स्तुतिमहार्णवकर्णधारः। स्तोतुं भवानि स भवच्चरणारविन्दभक्तिग्रहः किमपि मां मुखरीकरोति ॥४॥ सूते जगन्ति भवती भवती बिभर्ति जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि। मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि लीलायितं जयति चित्रमिदं भवत्याः ॥५॥ यस्मिन्मनागऽपि नवाम्बुजपत्रगौरि! गौरि! प्रसादमधुरां दृशमाऽदधासि। तस्मिन्निरन्तरमऽनङ्गशरावकीर्णसीमन्तिनीनयनसन्ततयः पतन्ति ॥६॥ पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रवरस्य तस्य विद्याधरप्रणतिचुम्बितपादपीठः। यच्चक्रवर्तिपदवीप्रणयः स एष त्वत्पादपङ्कजरजःकणजः प्रसादः॥७॥ कल्पद्रुमप्रसवकल्पितचित्रपूजामुद्दीपितप्रियतमामदरक्तगीतिम्। नित्यं भवानि भवतीमुपवीणयन्ति विद्याधराः कनकशैलगुहागृहेषु ॥८॥ लक्ष्मीवशीकरणकर्मणि कामिनीनामाऽकर्षणव्यतिकरेषु च सिद्धमन्त्रः। नीरन्ध्रमोहतिमिरच्छिदुरप्रदीपो देवि! त्वदऽङ्घ्रिजनितो जयति प्रसादः ॥९॥ देवि त्वदऽङ्घ्रिनखरत्नभुवो मयूखाः प्रत्यग्रमौक्तिकरुचो मुदमुद्वहन्ति। सेवानतिव्यतिकरे सुरसुन्दरीणां सीमन्तसीम्नि कुसुमस्तवकायितं यैः।१०। मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिनदीधितिदीप्तिदीप्तं मध्येललाटममरायुधरश्मिचित्रम्। हृच्चक्रचुम्बिहुतभुक्कणिकानुरूपं ज्योतिर्यदेतदिदमम्ब! तव स्वरूपम् ॥११॥ रूपं तव स्फुरितचन्द्रमरीचिगौरमाऽलोकते शिरसि

वागधिदैवतं यः । निःसीमसूक्तिरचनामृतनिर्भरस्य तस्य प्रसादमधुराः प्रसरन्ति वाचः ॥१२॥ सिन्दूरपांसुपटलच्छुरितामिव द्यां त्वत्तेजसा जतुरसस्नपितामिवोर्वीम् । यः पश्यति क्षणमपि त्रिपुरे ! विहाय व्रीडां मृडानि ! सुदृशस्तमनुद्रवन्ति ॥१३॥ मातर्मुहूर्तमपि यः स्मरति स्वरूपं लाक्षारसप्रसरतन्तुनिभं भवत्याः । ध्यायंत्यनन्यमनसस्तमनङ्ग-तप्ताः प्रद्युम्नसीम्नि सुभगत्वगुणं तरुण्यः ॥१४॥ योयं चकास्ति गगनार्णवरत्नमिन्दुर्योयं सुराऽसुरगुरुः पुरुषः पुराणः । यद्वाममर्ध-मिदमऽन्धकसूदनस्य देवि ! त्वमेव तदितिप्रतिपादयन्ति ॥१५॥ इच्छानुरूपमनुरूपगुणप्रकर्ष सङ्कर्षिणि ! त्वमनुसृत्य यदा बिभर्षि । जायेत स त्रिभुवनैकगुरुस्तदानीं देवः शिवोपि भुवनत्रयसूत्रधारः ॥१६॥ रुद्राणि ! विद्रुममयीं प्रतिमामिव त्वां ये चिन्तयन्त्यरुण-कान्तिमऽनन्यरूपाम् । तानेत्य पक्ष्मलदृशः प्रसभं भजन्ते कण्ठाऽव-सक्तमृदुबाहुलतास्तरुण्यः ।१७। त्वद्रूपमुल्लसितदाडिमपुष्परक्तमुद्भाव-येन्मदनदैवतमक्षरं यः । तं रूपहीनमपि मन्मथनिर्विशेषमालोक-यन्त्युरुनितम्बभरास्तरुण्यः ॥१८॥ ध्याताऽसि हैमवति ! येन हि-मांशुरश्मिमालाऽमलद्युतिरऽकल्मषमानसेन । तस्याऽविलम्बमऽनव-द्यमऽनल्पकल्पमऽल्पैर्दिनैः सृजसि सुन्दरि ! वाग्विलासम् ॥१९॥ आधारमारुतनिरोधवशेन येषां सिन्दूररञ्जितसरोजगुणानुकारि । तीव्रं हृदि स्फुरति देवि ! वपुस्त्वदीयं ध्यायन्ति तानिह समीहितसिद्ध-साध्याः ॥२०॥ त्वामैन्दवीमिव कलामनुभालदेशमुद्भासिताम्बर-तलामऽवलोकयन्तः । सद्यो भवानि ! सुधियः कवयो भवन्ति त्वं

भावनाहितधियां कुलकामधेनुः ॥२१॥ त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुण्डलीति त्वां कामिनीति कमलेति कलावतीति । त्वां मालिनीति ललितेत्यपराजितेति देवि ! स्तुवन्ति विजयेति जयेत्युमेति ॥२२॥ ये चिन्तयन्त्यरुणमण्डलमध्यवर्ति रूपं तवाम्ब ! नवयावकपङ्कपिङ्गम् । तेषां सदैव कुसुमायुधबाणभिन्नवक्षःस्थला मृगदृशो वशगा भवन्ति ॥२३॥ उत्तप्तहेमरुचिरे ! त्रिपुरे ! पुनीहि चेतश्चिरन्तनमघौघवनं लुनीहि । कारागृहे निगडबन्धनपीडितस्य त्वत्संस्मृतौ झटिति मे निगडास्त्रुट्यन्ते ॥२४॥ शर्वाणि सर्वजनवन्दितपादपद्मे पद्मच्छदच्छविविडम्बितनेत्रलक्ष्मि ! निष्पापमूर्तिजनमानसराजहंसि ! हंसि त्वमापदमऽनेकविधां जनस्य ॥२५॥ त्वत्पादपङ्कजरजःप्रणिपातपूतैः पुण्यैरनल्पमतिभिः कृतिभिः कवीन्द्रैः । क्षीरक्षपाकरदुकूलहिमावदाता कैरप्यवापि भुवनत्रितयेऽपि कीर्तिः ॥२६॥ त्वद्रूपैकनिरूपणप्रणयिताबन्धो दृशोस्त्वद्गुणग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि । त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तनं वाचि मे कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मे देवि ! मा शाम्यतु ॥२७॥ उद्दामकामपरमार्थसरोजषण्डचण्डद्युतिद्युतिमुपासितषट्प्रकाराम् । मोहद्विपेन्द्रकदनोद्यतबोधसिंहलीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि ॥२८॥ गणेशवटुकस्तुता रतिसहायकामान्विता स्मरारिवरविष्टरा कुसुमबाणबाणैर्युता । अनङ्गकुसुमादिभिः परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः कदम्बवनमध्यगा त्रिपुरसुन्दरी पातु नः ॥२९॥ यः स्तोत्रमेतदनुवासरमीश्वरायाः श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति । तस्येप्सितं फलति

राजभिरीड्यतेऽसा जायेत स प्रियतमो हरिणेक्षणानाम् ॥३०॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रहरिचन्द्रसहस्ररश्मिस्कन्दद्विपाननहुताशनवन्दितायै वागीश्वरि! त्रिभवनेश्वरि! विश्वमातरन्तर्बहिश्च कृतसंस्थितये नमस्ते ॥३१॥ इति श्रीपञ्चस्तव्यां चर्चस्तवो द्वितीयः समाप्तः ॥

अथ तृतीयो घटस्तवः ॥

ॐनमस्त्रिपुरसुन्दर्यै ॥ देवि त्र्यम्बकपत्नि पार्वति सति त्रैलोक्यमातः शिवे शर्वाणि त्रिपुरे मृडानि वरदे रुद्राणि कात्यायनि। भीमे भैरवि चण्डि शर्वरि कले! कालक्षये शूलिनि त्वत्पादप्रणतानऽनन्यमनसः पर्याकुलान्पाहि नः ॥१॥ उन्मत्ता इव सग्रहा इव विषव्यासक्तमूर्च्छा इव प्राप्तप्रौढमदा इवातिविरहग्रस्ता इवार्ता इव। ये ध्यायन्ति हि शैलराजतनयां धन्यास्त एकाश्रितस्त्यक्तोपाधिविवृद्धरागमनसो ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥२॥ देवि त्वां सकृदेव यः प्रणमति क्षोणीभृतस्तं नमन्त्याजन्मस्फुरदङ्घ्रिपीठविलुठत्कैरीटकोटिच्छटाः। यस्त्वामर्चति सोऽर्च्यते सुरगणैर्यः स्तौति स स्तूयते यस्त्वां ध्यायति तं स्मरार्तिविधुरा ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥३॥ ध्यायन्ति ये क्षणमपि त्रिपुरे हृदि त्वां लावण्ययौवनधनैरपि विप्रयुक्ताः। ते विस्फुरन्ति ललितायतलोचनानां चित्तैकभित्तिलिखितप्रतिमाः पुमांसः ॥४॥ एतं किंनु दृशा पिबाम्युत विशाम्यस्याङ्गमङ्गैर्निजैः, किंवामुं निगलाम्यनेन सहसा किंवैकतामाश्रये। तस्येत्थं विवशो विकल्पघटनाकूतेन यो-

षिज्जनः किं तद्यन्न करोति देवि! हृदये यस्य त्वमावर्तसे ॥५॥
विश्वव्यापिनि यद्वदीश्वर इति स्थाणावनन्याश्रयः शब्दः शक्तिरिति
त्रिलोकजननि त्वय्येव तथ्यस्थितिः। इत्थं सत्यपि शक्नुवन्ति यदिमाः
क्षुद्रा रुजो बाधितुं त्वद्भक्तानऽपि न क्षणोषि च रुषा तद्देवि चित्रं
महत् ॥६॥ इन्दोर्मध्यगतां मृगाङ्कसदृशच्छायां मनोहारिणीं पाण्डू-
त्फुल्लसरोरुहासनगतां स्निग्धप्रदीपच्छविम्। वर्षन्तीममृतं भवानि
भवतीं ध्यायन्ति ये देहिनस्ते निर्मुक्तरुजो भवन्ति विपदः प्रोज्झन्ति
तान्दूरतः ॥७॥ पूर्णेन्दोः शकलैरिवातिबहलैः पीयूषपूरैरिव क्षीराब्धे-
र्लहरीभरैरिव सुधापङ्कस्य पिण्डैरिव। प्रालेयैरिव निर्मितं तव वपु-
र्ध्यायन्ति ये श्रद्धया चित्तान्तर्निहितार्तितापविपदस्ते सम्पदं बिभ्रति
॥८॥ ये संस्मरन्ति तरलां सहसोल्लसन्तीं त्वां ग्रन्थिपञ्चकभिदं तरु-
णार्कशोणाम्। रागार्णवे बहलरागिणि मज्जयन्तीं कृत्स्नं जगद्दधति
चेतसि तान्मृगाक्ष्यः ॥९॥ लाक्षारसस्नपितपङ्कजतन्तुतन्वीमऽन्तः
स्मरत्यऽनुदिनं भवतीं भवानि। यस्तं स्मरप्रतिममऽप्रतिमस्वरूपा
नेत्रोत्पलैर्मृगदृशो भृशमऽर्चयन्ति ॥१०॥ स्तुमस्त्वां वाचमऽव्यक्तां
हिमकुन्देन्दुरोचिषम्। कदम्बमालां बिभ्राणामाऽऽपादतललम्बिनीम्
॥११॥ मूर्ध्नीन्दोः सितपङ्कजासनगतां प्रालेयपाण्डुत्विषं वर्षन्तीम-
ऽमृतं सरोरुहभुवो वक्त्रेऽपि रन्ध्रेऽपि च। अच्छिन्ना च मनोहरा च
ललिता चाऽतिप्रसन्नाऽपि च त्वामेव स्मरतां स्मरारिदयिते ! वाक्-
सर्वतो वल्गति ॥१२॥ ददातीष्टान्भोगान्क्षपयति रिपून्हन्ति विपदो
दहत्याधीन्व्याधीञ्छमयति सुखानि प्रतनुते। हठादऽन्तर्दुःखं दलयति

पिनष्टीष्टविरहं सकृद्ध्याता देवी किमिव निरवद्यं न कुरुते ॥१३॥ यस्त्वां ध्यायति वेत्ति विन्दति जपत्यालोकते चिन्तयत्यन्वेति प्रतिपद्यते कलयति स्तौत्याश्रयत्यर्चति । यश्च त्र्यम्बकवल्लभे ! तव गुणानाऽकर्णयत्यादरात्तस्य श्रीर्न गृहादपैति विजयस्तस्याग्रतो धावति ॥१४॥ किं किं दुःखं दनुजदलिनि ! क्षीयते न स्मृतायां का का कीर्तिः कुलकमलिनि ! ख्याप्यते न स्तुतायाम् । का का सिद्धिः सुरवरनुते ! प्राप्यते नार्चितायां कं कं योगं त्वयि न चिन्वते चित्तमालम्बितायाम् ॥१५॥ ये देवि ! दुर्धरकृतान्तमुखान्तरस्था ये कालि ! कालघनपाशनितान्तबद्धाः ये चण्डि ! चण्डगुरुकल्मषसिन्धुमग्नास्तान्पासि मोचयसि तारयसि स्मृतैव ॥१६॥ लक्ष्मीवशीकरणचूर्णसहोदराणि त्वत्पादपङ्कजरजांसि चिरं जयन्ति । यानि प्रणाममिलितानि नृणां ललाटे लुम्पन्ति दैवलिखितानि दुरक्षराणि ॥१७॥ रे मूढाः किमयं वृथैव तपसा कायः परिक्लिश्यते यज्ञैर्वा बहुदक्षिणैः किमितरे रिक्तीक्रियन्ते गृहाः । भक्तिश्चेदऽविनाशिनी भगवती पादद्वयी सेव्यतामुन्निद्राम्बुरुहातपत्रसुभगा लक्ष्मीः पुरो धावति ॥१८॥ याचे न कंचन न कंचन वञ्चयामि सेवे न कंचन निरस्तसमस्तदैन्यः । श्लक्ष्णं वसे मधुरमद्मि भजे वरस्त्रीर्देवी हृदि स्फुरति मे कुलकामधेनुः ॥१९॥ शब्दब्रह्ममयि ! स्वच्छे देवि त्रिपुरसुन्दरि । यथा शक्ति जपं पूजां गृहाण परमेश्वरि ॥२०॥ नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु विदूषकाः । अवस्था शाम्भवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा ॥२१॥ दर्शनात्पापशमनी जपान्मृत्युविना-

शिनी। पूजिता दुःखदौर्भाग्यहरा त्रिपुरसुन्दरी ॥२२॥ नमामि यामिनीनाथलेखालङ्कृतकुन्तलाम् । भवानीं भवसन्तापनिर्वापणसुधानदीम् ॥२३॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्गतम् । त्वया तत्क्षम्यतां देवि ! कृपया परमेश्वरि ॥२४॥ इति पञ्चस्तव्यां-घटस्तवस्तृतीयः ॥

॥ अथ पञ्चस्तव्यामऽम्बस्तवश्चतुर्थः ॥

ॐ यामाऽऽमनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं विद्येति यां श्रुतिरहस्यविदो वदन्ति । तामऽर्धपल्लवितशङ्कररूपमुद्रां देवीमऽनन्यशरणः शरणं प्रपद्ये ॥१॥ अम्ब ! स्तवेषु तव तावदऽकर्तृकाणि कुण्ठीभवन्ति वचसामऽपि गुम्फनानि । डिम्बस्य मे स्तुतिरसासवमऽस्त्रसाऽपि वात्सल्यनिघ्नहृदयां भवतीं धिनोति ॥२॥ व्योमेति बिन्दुरिति नाद इतीन्दुरेखारूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति । निःष्यन्दमानसुखबोधसुधास्वरूपा विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥३॥ आविर्भवत्पुलकसन्ततिभिः शरीरैर्निष्यन्दमानसलिलैर्नयनैश्च नित्यम्। वाग्भिश्च गद्गदपदाभिरुपासते ये पादौ तवाम्ब ! भुवनेषु त एव धन्याः ॥४॥ वक्त्रं यदुद्यतमऽभिष्टुतये भवत्यास्तुभ्यं नमो यदपि देवि ! शिरः करोति । चेतश्च यत्त्वयि परायणमम्ब तानि कस्यापि कैरपि भवन्ति तपोविशेषैः ॥५॥ मूलालवालकुहरादुदिता भवानि निर्भिद्य षट्सरसिजानि तडिल्लतेव । भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुव-

मण्डलेन्दुनिःष्यन्दमानपरमामृततोयरूपा ॥६॥ दग्धं यदा मदनमेकमनेकधा ते मुग्धः कटाक्षविधिरङ्कुरयांचकार । धत्ते तदाप्रभृति देवि ललाटनेत्रं सत्यं ह्रियेव मुकुलीकृतमिन्दुमौलिः ॥७॥ अज्ञातसम्भवमनाकलितान्ववायं भिक्षुं कपालिनमवाससमद्वितीयम् । पूर्वं करग्रहणमङ्गलतो भवत्याः शम्भुं क एव बुबुधे गिरिराजकन्ये ॥८॥ चर्माम्बरं च शवभस्मविलेपनं च भिक्षाटनं च नटनं च परेतभूमौ । वेतालसंहतिपरिग्रहता च शम्भोः शोभां बिभर्ति गिरिजे तव साहचर्यात् ॥९॥ कल्पोपसंहरणकेलिषु पण्डितानि चण्डानि खण्डपरशोरपि ताण्डवानि । आलोकनेन तव कोमलितानि मातर्लास्यात्मना परिणमन्ति जगद्विभूत्यै ॥१०॥ जन्तोरपश्चिमतनोः सति कर्मसाम्ये निःशेषपाशपटलच्छिदुरा निमेषात् । कल्याणि दैशिककटाक्षसमाश्रयेण कारुण्यतो भवसि शम्भववेधदीक्षा ॥११॥ मुक्ताविभूषणवती नवविद्रुमाभा यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव सन्ध्या । एकः स एव भुवनत्रयसुन्दरीणां कन्दर्पतां व्रजति पञ्चशरीं विनापि ॥१२॥ ये भावयन्त्यमृतवाहिभिरंशुजालैराप्याययमानभुवनाममृतेश्वरीं त्वाम् । ते लङ्घयन्ति ननु मातरलङ्घनीयां ब्रह्मादिभिः सुरवरैरपि कालकक्ष्याम् ॥१३॥ यः स्फाटिकाक्षगुणपुस्तककुण्डिकाढ्यां व्याख्यासमुद्यतकरां शरदिन्दुशुभ्राम् । पद्मासनां च हृदये भवतीमुपास्ते मातः स विश्वकविताकिकचक्रवर्ती ॥१४॥ बर्हावतंसयुतबर्बरकेशपाशां गुञ्जावलीकृतघनस्तनहारशोभाम् । श्यामां प्रवालवदनां सुकुमारहस्तां त्वामेव नौमि शबरीं शबरस्य जायाम् ॥१५॥ अर्धेन किं नवलताललितेन मुग्धे

क्रीतं विभोः परुषमर्धमिदं त्वयेति । आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये मन्दस्मितेन तव देवि जडीभवन्ति ॥१६॥ ब्रह्माण्डबुद्बुद-कदम्बकसंकुलोयं मायोदधिर्विविधदुःखतरङ्गमालः । आश्चर्यमम्ब झटिति प्रलयं प्रयाति त्वद्ध्यानसन्ततिमहावडवामुखाग्नौ ॥१७॥ दाक्षायणीति कुटिलेति गुहारणीति कात्यायनीति कमलेति कला-वतीति । एका सती भगवती परमार्थतोऽपि सन्दृश्यसे बहुविधा ननु-नर्तकीव ॥१८॥ आनन्दलक्षणमनाहतनाम्नि देशे नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे । प्रत्यङ्मुखेन मनसा परिचीयमानं शंसन्ति नेत्रसलि-लैः पुलकैश्च धन्याः ॥१९॥ त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं त्वं चेतनासि पुरुषे पवने बलं त्वम् । त्वं स्वादुतासि सलिले शिखिनि त्वमूष्मा निःसारमेव निखिलं त्वदृते यदि स्यात् ॥२०॥ ज्योतींषि यद्दिवि चरन्ति यदन्तरिक्षं सूते पयांसि यदहिर्धरणीं च धत्ते । यद्वाति वायुरनलो यदुदर्चिरास्ते तत्सर्वमम्ब तव केवलमाज्ञ-येव ॥२१॥ सङ्कोचमिच्छसि यदा गिरिजे तदानीं वाक्तर्कयोस्त्वमसि भूमिरनामरूपा । यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं त्वन्नामरूपगणा-नाः सुकरीभवन्ति ॥२२॥ भोगाय देवि भवतीं कृतिनः प्रणम्य भ्रूकिङ्करीकृतसरोजगृहासहस्राः । चिन्तामणिप्रचयकल्पितकेलिशैले कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ते ॥२३॥ हन्तुं त्वमेव भवसि त्वद-धीनमीशे संसारतापमखिलं दयया पशूनाम् । वैकर्तनी किरणसंहति-रेव शक्ता धर्मं निजं शमयितुं निजयैव वृष्ट्या ॥२४॥ शक्तिः शरी-रमधिदैवतमन्तरात्मा ज्ञानं क्रिया करणमासनजालमिच्छा । ऐश्वर्य-

मायतनमावरणानि च त्वं किं तन्न यन्नवसि देवि शशाङ्कमौलेः ।२५। भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा विद्याऽनले मरुति शान्तिरतीतशान्तिः । व्योम्नीति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं तासां विदूरतरमम्ब पदं त्वदीयम् ॥२६॥ यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं नाङ्गीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये । तावद्विकल्पजटिलाः कुटिलप्रकारास्तर्कग्रहाः समयिनां प्रलयं न यान्ति ॥२७॥ यद्देवयानपितृयानविहारमेके कृत्वा मनः करणमण्डलसार्वभौमम् । याने निवेश्य तव कारणपञ्चकस्य पर्वाणि पार्वति नयन्ति निजासनत्वम् ॥२८॥ स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु मूर्तेः कस्याश्चनापि तव वैभवमम्ब यस्याः । पत्या गिरामपि न शक्यत एव वक्तुं सासि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम् ॥२९॥ कालाग्निकोटिरुचिमम्ब षडध्वशुद्धावाप्लावनेषु भवतीममृतौघवृष्टिम् । श्यामां घनस्तनतटां सकलीकृतौ च ध्यायन्त एव जगतां गुरवो भवन्ति ॥३०॥ विद्यां परां कतिचिदम्बरमम्ब केचिदानन्दमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् । त्वां विश्वमाहुरपरे वयमामनाम साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ॥३१॥ कुवलयदलनीलं बर्बरस्निग्धकेशं पृथुतरकुचभाराक्रान्तकान्तावलग्नम् । किमिह बहुभिरुक्तैस्त्वत्स्वरूपं परं नःसकलभुवनमातः ! सन्ततं सन्निधत्ताम् ॥३२॥ इति श्रीपञ्चस्तव्यां चतुर्थोऽम्बास्तवः ॥

अथ सकलजननीस्तवः पञ्चमः ॥

ॐ अजानन्तो यान्ति क्षयमवशमन्योन्यकलहैरमी मायाग्रन्थौ

तव परिलुठन्तः समयिनः । जगन्मातर्जन्मज्वरभयतमःकौमुदि ! वयं नमस्ते कुर्वाणाः शरणमुपयामो भगवतीम् ॥१॥ वचस्तर्कागम्यस्वरसपरमानन्दविभवप्रबोधाकाराय द्युतितुलितनीलोत्पलरुचे । शिवस्याराध्याय स्तनभरविनम्राय सततं नमो यस्मै कस्मैचन भवतु मुग्धाय महसे ॥ २ ॥ लुठद्गुञ्जाहारस्तनभरनमन्मध्यलतिकामुदञ्चद्घर्माम्भःकणगुणितनीलोत्पलरुचम् । शिवं पार्थत्राणप्रवणमृगयाकारगुणितं शिवामन्वग्यान्तीं शबरमहमन्वेमि शबरीम् ॥३॥ मिथः केशाकेशिप्रधननिधनास्तर्कघटना बहुश्रद्धाभक्तिप्रणयविषयाश्चाप्तविधयः । प्रसीद प्रत्यक्षीभव गिरिसुते देहि शरणं निरालम्बं चेतः परिलुठति पारिप्लवमिदम् ॥४॥ शुनां वा वह्नेर्वा खगपरिषदो वा यदशनं कदा केन क्वेति क्वचिदपि न कश्चित्कलयति । अमुष्मिन्विश्वासं विजहिहि ममाह्लाय वपुषि प्रपद्येथाश्चेतः सकलजननीमेव शरणम् ॥५॥ अनाद्यन्ताभेदप्रणयरसिकापि प्रणयिनी शिवस्यासीर्यत्त्वं परिणयविधौ देवि ! गृहिणी । सवित्री भूतानामपि यदुदभूः शैलतनया तदेतत्संसारप्रणयनमहानाटकसुखम् ॥६॥ ब्रुवन्त्येके तत्त्वं भगवति सदन्ये विदुरसत्परे मातः प्राहुस्तव सदसदन्ये सुकवयः । परे नैतत्सर्वं समभिदधते देवि सुधियस्तदेतत्त्वन्मायाविलसितमशेषं ननु शिवे ॥७॥ तडित्कोटिज्योतिर्द्युतिदलितषड्ग्रन्थिगहनं प्रविष्टं स्वाधारं पुनरपि सुधावृष्टिवपुषा । किमप्यष्टात्रिंशत्किरणसकलीभूतमनिशं भजे धाम श्यामं कुचभरनतं बर्बरकचम् ॥८॥ चतुष्पत्रान्तः षड्दलभगपुटान्तस्त्रिवलयस्फुरद्विद्युद्वह्निद्युमणिनियुताभद्युतियुते । षडश्रं भित्त्वादौ दश-

दलमथ द्वादशदशं कलाश्रं च द्व्यश्रं गतवति नमस्ते गिरिसुते ।९। कुलं केचित्प्राहुर्वपुरकुलमन्ये तव बुधाः परे तत्सम्भेदं समभिदधते कौलमपरे । चतुर्णामप्येषामुपरि किमपि प्राहुरपरे महामाये तत्त्वं तव कथममी निश्चिनुमहे ॥१०॥ षडध्वारण्यानीं प्रलयरविकोटिप्रतिरुचा रुचा भस्मीकृत्य स्वपदकमलप्रह्वशिरसाम् । वितन्वानः शैवं किमपि वपुरिन्दीवररुचिः कुचाभ्यामानम्रः शिवपुरुषकारो विजयते ॥११॥ प्रकाशानन्दाभ्यामविदितचरीं मध्यपदवीं प्रविश्यैतद्द्वन्द्वं रविशशिसमाख्यं कवलयन् । प्रविश्योर्ध्वं नादं लयदहनभस्मीकृतकुलः प्रसादात्ते जन्तुः शिवमकुलमम्ब ! प्रविशति ॥१२॥ प्रियङ्गुश्यामाङ्गीमरुणतरवासःकिसलयां समुन्मीलन्मुक्ताफलबहुलनेपथ्यकुसुमाम् । स्तनद्वन्द्वस्फारस्तबकनमितां कल्पलतिकां सकृद्ध्यायन्तस्त्वां दधति शिवचिन्तामणिपदम् ॥१३॥ षडाधारावर्तैरपरिमितमन्त्रोर्मिपटलैश्चलन्मुद्राफेनैर्बहुविधलसद्दैवतझषैः । क्रमस्रोतोभिस्त्वं वहसि परनादामृतनदी भवानि प्रत्यग्रा शिवचिदमृताब्धिप्रणयिनी ॥१४॥ महीपाथोवह्निश्वसनवियदात्मेन्दुरविभिर्वपुर्भिर्ग्रस्तांशैरपि तव कियानम्ब महिमा । अमून्यालोक्यन्ते भगवति ! न कुत्राप्यणुतरामवस्थां प्राप्तानि त्वयि तु परमव्योमवपुषि ॥१५॥ मनुष्यास्तिर्यञ्चो मरुत इति लोकत्रयमिदं भवाम्भोधौ मग्नं त्रिगुणलहरीकोटिलुठितम् । कटाक्षश्चेदत्र क्वचन तव मातः ! करुणया शरीरी सद्योऽयं व्रजति परमानन्दतनुताम् ॥१६॥ कलां प्रज्ञामाद्यां समयमनुभूतिं समरसां गुरुं पारम्पर्यं विनयमुपदेशं शिवकथाम् । प्रमाणं निर्वाणं परममऽनुभूतिं परगुह्यं विधिं

विद्यामाहुः सकलजननीमेव मुनयः ॥१७॥ प्रलीने शब्दौघे तदनु विरते बिन्दुविभवे ततस्तत्त्वे चाष्टध्वनिभिरनुपाधिन्युपरते । श्रिते शाक्ते पर्वण्यनुकलितचिन्मात्रगहनां स्वसंवित्तिं योगी रसयति शिवाख्यां परतनुम् ॥१८॥ परानन्दाकारां निरवधिशिवैश्वर्यवपुषं निराकारज्ञानप्रकृतिमनवच्छिन्नकरुणाम् । सवित्रीं भूतानां निरतिशयधामास्पदपदां भवो वा मोक्षो वा भवतु भवतीमेव भजताम् ॥१९॥ जगत्काये कृत्वा तमपि हृदये तच्च पुरुषे पुमांसं बिन्दुस्थं तमपि परनादाख्यगहने । तदेतज्ज्ञानाख्ये तदपि परमानन्दविभवे महाव्योमाकारे त्वदनुभवशीलो विजयते ॥२०॥ विधे विद्ये वेद्ये विविधसमये वेदजननि ! विचित्रे विश्वाद्ये विनयसुलभे वेदगुलिके । शिवाज्ञे शीलस्थे शिवपदवदान्ये शिवनिधे शिवे मातर्मह्यं त्वयि वितर भक्तिं निरुपमाम् ॥२१॥ विधेर्मुण्डं हृत्वा यदकुरुत पात्रं करतले हरिं शूलप्रोतं यदऽगमयदंसाभरणताम् । अलंचक्रे कण्ठं यदपि गरलेनाम्ब गिरिशः शिवस्थायाः शक्तेस्तदिदमखिलं ते विलसितम् ॥२२॥ विरिञ्च्याख्या मातः सृजसि हरिसंज्ञा त्वमवसि त्रिलोकीं रुद्राख्या हरसि विदधासीश्वरदशाम् । भवन्ती सादाख्या शिवयसि च पाशौघदलिनी त्वमेवैकाऽनेका भवसि कृतभेदैर्गिरिसुते ॥२३॥ मुनीनां चेतोभिः प्रमृदितकषायैरपि मनागऽशक्ये संस्प्रष्टुं चकितचकितैरम्ब सततम् । श्रुतीनां मूर्धानः प्रकृतिकठिनाः कोमलतरे कथं ते विन्दन्ते पदकिसलये पार्वति पदम् ॥२४॥ तडिद्वल्लीं नित्याममृतसरितं पाररहितां मलोत्तीर्णां ज्योत्स्नां प्रकृतिमगुणग्रन्थिगहनाम् । गिरां दूरां

विद्यामऽवनतकुचां विश्वजननीमपर्यन्तां लक्ष्मीमभिदधति सन्तो भगवतीम् ॥२५॥ शरीरं क्षित्यम्भःप्रभृतिरचितं केवलमिदं सुखं दुःखं चायं कलयति पुमांश्चेतन इति। स्फुटं जानानोऽपि प्रभवति न देही रहयितुं शरीराहंकारं तव समयबाह्यो गिरिसुते ॥२६॥ पिता माता भ्राता सुहृदऽनुचरः सद्म गृहिणी वपुः पुत्रो मित्रं धनमपि मां विजहति। तदा मे भिन्दाना सपदि भय मोहान्धतमसं महाज्योत्स्ने मातर्भव करुणया सन्निधिकरी ॥२७॥ सुता दक्षस्यादौ किल सकलमातस्त्वमुदभूः सदोषं तं हित्वा तदनु गिरिराजस्य तनया। अनाद्यन्ता शम्भोरपृथगपि शक्तिर्भगवती विवाहाज्जायासीत्यहह चरितं वेत्ति तव कः ॥२८॥ कणास्त्वद्दीप्तीनां रविशशिकृशानुप्रभृतयः परं ब्रह्म क्षुद्रं तव नियतमाऽनन्दकणिका। शिवादिक्षित्यन्तं त्रिवलयतनोः सर्वमुदरे तवास्ते भक्तस्य स्फुरसि हृदि चित्रं भगवति ॥२९॥ त्वया यो जानीते रचयति भवत्यैव सततं त्वयैवेच्छत्यम्ब! त्वमसि निखिला यस्य तनवः। गतः साम्यं शम्भुर्वहति परमं व्योम भवती तथाप्येवं हित्वा विहरति शिवस्येति किमिदम् ॥३०॥ पुरः पश्चादन्तर्बहिरपरिमेयं परिमितं परं स्थूलं सूक्ष्मं सकलमकुलं गुह्यमगुहम्। दवीयो नेदीयः सदसदिति विश्वं भगवतीं सदा पश्यन्त्यज्ञां वहसि भुवनक्षोभजननीम् ॥३१॥ मयूखाः पूष्णीव ज्वलन इव तद्दीप्तिकणिकाः पयोधौ कल्लोलप्रतिहतमहिम्नीव पृषतः। उदेत्योदेत्याम्ब त्वयि सह निजैस्तात्त्विककुलैर्भजन्ते तत्त्वौघाः प्रशममनुकल्पं परवशाः ॥ ३२ ॥ विधुर्विष्णुर्ब्रह्मा प्रकृतिरणुरात्मा

दिनकरः स्वभावो जैनेन्द्रः सुगतमुनिराकाशमनिलः । शिवः शक्तिश्चेति श्रुतिविषयतां तामुपगतां विकल्पैरेभिस्त्वामऽभिदधति सन्तो भगवतीम् ॥३३॥ प्रविश्य स्वं मार्गं सहजदयया दैशिकदृशा षडध्वध्वान्तौघच्छिदुरगणनातीतकरुणाम् । परानन्दाकारां सपदि शिवयन्तीमपि तनुं स्वमात्मानं धन्याश्चिरमुपलभन्ते भगवतीम् ॥३४॥ शिवस्त्वं शक्तिस्त्वं त्वमसि समया त्वं समयिनी त्वमात्मा त्वं दीक्षा त्वमयमणिमादिर्गुणगणः । अविद्या त्वं विद्या त्वमसि निखिलं त्वं किमपरं पृथक्तत्त्वं त्वत्तो भगवति न वीक्षामह इमे ॥३५॥ असंख्यैः प्राचीनैर्जननि जननैः कर्मविलयाद्गते जन्मन्यन्तं गुरुवपुषमासाद्य गिरिशम् । अवाप्याज्ञां शैवीं कृमतनुरपि त्वां विदितवान्नयेयं त्वत्पूजास्तुतिविरचनेनैव दिवसान् ॥३६॥ यत्षट्पत्रं कमलमुदितं तस्य या कर्णिकाख्या योनिस्तस्याः प्रथितमुदरे यत्तदोङ्कारपीठम् । तस्मिन्नऽन्तःकुचभरनतां कुण्डलीतः प्रवृत्तां श्यामाकारां सकलजननीं सन्ततं भावयामि ॥३७॥ भुवि पयसि कृशानौ मारुते खे शशाङ्के सवितरि यजमानेऽप्यष्टधा शक्तिरेका । वहति कुचभराभ्यां या विनम्रापि विश्वं सकलजननि सा त्वं पाहि मामित्यवश्यम् ॥३८॥ इति पञ्चस्तव्यां सकलजननीस्तवः पञ्चमः ॥ समाप्ता चेयं पञ्चस्तवी ।

चतुर्थोऽध्यायः

इन्द्रादि देवताओं द्वारा देवी की स्तुति

ध्यानम्

ॐकालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृत्तां सेवितां सिद्धिकामैः ॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या।
तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥२॥
देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या।
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताःस्म विदधातु शुभानि सा नः ॥३॥
यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय

नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥४॥
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥५॥
किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि ।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥६॥
हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा ।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥७॥
यस्याः समस्तसुरतासमुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि ।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥८॥
या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्व-
मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः ।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ॥९॥

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् ।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥१०॥
मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा ।
श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥११॥
ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-
बिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम् ।
अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥१२॥
दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल-
मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः ।
प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥१३॥
देवि प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥१४॥
ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां

तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥१५॥
धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादा-
ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥१६॥
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि ! का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥१७॥
एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि ॥१८॥
दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ॥१९॥
खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् ।

यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
योग्यानन तव विलोकयतां तदेतत् ॥२०॥
दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
वीर्यं च हन्तृहृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥२१॥
केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र ।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि ! वरदे ! भुवनत्रयेऽपि ॥२२॥
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा ।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥२३॥
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥२४॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥२५॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥२६॥
खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।

करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥२७॥

ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दोद्भवैः ।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥२९॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता ।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥३०॥

देव्युवाच ॥ ३१ ॥

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥३२॥

देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते ॥३४॥
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ॥३५॥
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥३६॥
तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम् ।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥३७॥

ऋषिरुवाच ॥३८ ॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥३९॥
इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा ।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥४०॥

पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाभवत् ।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः ॥४१॥
रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत्कथयामि ते ।ह्रीं ॐ ४२।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥
उवाच ५, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः ३५,
एवम् ४२ एवमादितः ॥ २५९ ॥

एकादशोऽध्यायः

देवताओं द्वारा देवी की स्तुति तथा देवी द्वारा देवताओं को वरदान

ध्यानम्

ॐबालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे
सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् ।

कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभाद्
विकाशिवक्त्राब्जविकाशिताशाः ॥२॥
देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥३॥
आधारभूता जगतस्त्वमेका
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि ।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ॥४॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया ।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥५॥
विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ॥६॥
सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी ।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥७॥
सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते ।

स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥८॥
कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि ।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥९॥
सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१०॥
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तुते ॥११॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१२॥
हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि ।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१३॥
त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि ।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१४॥
मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे ।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तुते ॥१५॥
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे ।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१६॥
गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे ।
वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१७॥
नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे ।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१८॥

किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१९॥
शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले ।
घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२०॥
दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे ।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२१॥
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे ।
महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२२॥
मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि ।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२३॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥२५॥
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥२६॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥२७॥
असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥२८॥
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां

त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥२९॥
एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य
धर्मद्विषां देवि महासुराणाम् ।
रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्ममूर्तिं
कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ॥३०॥
विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या ।
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥३१॥
रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र ।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ।
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥३३॥
देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः ।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ॥३४॥
प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि ।

त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥३५॥

देव्युवाच ॥३६॥

वरदाहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥३७॥

देवा उचुः ॥३८॥

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥३९॥

देव्युवाच ॥४०॥

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे ।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥४१॥
नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसम्भवा ।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी ॥४२॥
पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥४३॥
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान्महासुरान् ।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥४४॥
ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः ।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥४५॥
भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि ।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा ॥४६॥

ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् ।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ॥४७॥
ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः ।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥४८॥
शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि ।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ॥४९॥
दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ॥५०॥
रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात् ।
तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥५१॥
भीमा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ॥५२॥
तदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम् ।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम् ॥५३॥
भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः ।
इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥५४॥
तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ।ॐ। ॥५५॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥११॥
उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः ५०,
एवम् ५५, एवमादितः ॥ ६३० ॥

प्रथमं शैलपुत्रीति द्वितीयं ब्रह्मचारिणी। तृतीयं चण्डघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायिनीति च। सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्। नवमं सिद्धिदात्रीति नव दुर्गाः प्रकीर्तिताः ॥१५४॥ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा पुष्णासि कामान्संकलानभीष्टान्। त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥

अथ भवानीनामसहस्रस्तोत्रम् ॥

ॐनमो भवान्यै

अरिशङ्खकृपाणखेटबाणान् सुधनुः शूलकतर्जनीं दधाना। भवतां महिषोत्तमाङ्गसंस्था नवदूर्वासदृशी श्रियेऽस्तु दुर्गा ॥१॥ ॐशङ्खत्रिशूलशरचापकरां त्रिनेत्रां तिग्मेतरांशुकलया विकसत्किरीटाम्। सिंहस्थितामसुरसिद्धनुतां च दुर्गां दूर्वानिभां दुरितदुःखहरां नमामि।२। अकुलकुलपतन्ती चक्रमध्ये स्फुरन्ती। मधुरमधुपिबन्ती कण्टकान्भक्षयन्ती ॥ दुरितमपहरन्ती साधकान्पोषयन्ती। जयति जयति देवी सुन्दरी क्रीडयन्ती ॥३॥ चतुर्भुजामेकवक्त्रां पूर्णेन्दुवदनप्रभाम्। खड्गशक्तिधरां देवीं वरदाभयपाणिकाम ॥ प्रेतसंस्थां महारौद्रीं भुजगेनोपवीतिनीम्। भवानीं कालसंहारबद्धमुद्राविभूषिताम ॥ जगत्स्थ-

तिकरीं ब्रह्मविष्णुरुद्रादिभिः सुरैः। स्तुतां तां परमेशानीं नौम्यहं विघ्नहारिणीम् ॥ ॐनमो भवान्यै ॥ कैलासशिखरे रम्ये देवदेवं महेश्वरम् । ध्यानोपरतमासीनं प्रसन्नमुखपङ्कजम् ॥ सुरासुरशिरोरत्नरञ्जिताङ्घ्रियुगं प्रभुम्। प्रणम्य शिरसा नन्दी बद्धाञ्जलिरभाषत ॥ श्रीनन्दिकेश्वर उवाच ॥ देवदेव जगन्नाथ संशयोस्ति महान्मम । रहस्यमेकमिच्छामि प्रष्टुं त्वां भक्तिवत्सलम् ॥ देवतायास्त्वया कस्याः स्तोत्रमेतद्दिवानिशम् । पठ्यतेऽविरतं नाथ ! त्वत्तः किमपरः परः ॥ इति पृष्टस्तदा देवो नन्दिकेन जगद्गुरुः । प्रोवाच भगवानेको विकसन्नेत्रपङ्कजः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ साधु साधु गणश्रेष्ठ पृष्टवानसि मां च यत् । स्कन्दस्यापि च यद्गोप्यं रहस्यं कथयामि तत् ॥ पुरा कल्पक्षये लोकान्सिसृक्षुर्मूढचेतना । गुणत्रयमयी शक्तिर्मूलप्रकृतिसंज्ञिता । तस्यामहं समुत्पन्नस्तत्त्वैस्तैर्महदादिभिः । चेतनेति ततः शक्तिर्मां काप्यालिङ्ग्य तस्थुषी । हेतुः सङ्कल्पजालस्य मनोधिष्ठायिनी शुभा ॥ इच्छेति परमा शक्तिरुन्मिमील ततः परम् । ततो वागिति विख्याता शक्तिः शब्दमयी परा ॥ प्रादुरासीज्जगन्माता वेदमाता सरस्वती । ब्राह्मी च वैष्णवी रौद्री कौमारी पार्वती शिवा॥ सिद्धिदा बुद्धिदा शान्ता सर्वमङ्गलदायिनी । तयैतत्सृज्यते विश्वमनाधारं च धार्यते ॥ तयैतत्पाल्यते सर्वं तस्यामेव प्रलीयते । अर्चिता प्रणता ध्याता सर्वभावविनिश्चिता ॥ अर्चिता प्रणता ध्याता सर्वभावविनिश्चिता ॥ आराधिता स्तुता सैव सर्वसिद्धिप्रदायिनी । तस्या अनुग्रहादेव तामेव स्तुतवानहम् ॥ सहस्रैर्नामभिर्दिव्यैस्त्रै-

लोकत्रयप्राणिपूजितैः । स्तवेनानेन सन्तुष्टा मामेव प्रविवेश सा ॥ तदारभ्य मया प्राप्तमैश्वर्यं पदमुत्तमम् । तत्प्रभावान्मया सृष्टं जगदेतच्चराचरम् ॥ ससुरासुरगन्धर्वयक्षराक्षसमानवम् । सपन्नगं ससमुद्रं सशैलवनकाननम् । सराशिग्रहनक्षत्रं पञ्चभूतगुणान्वितम् । नन्दिन्नामसहस्रेण स्तवेनानेन सर्वदा ॥ स्तुवे परापरां शक्तिं ममानुग्रहकारिणीम् । इत्युक्तोपरतं देवं चराचरगुरुं विभुम् । प्रणम्य शिरसा नन्दी प्रोवाच परमेश्वरम् ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणु नन्दिन्महाभाग स्तवराजमिमं शुभम् । सहस्रैर्नामभिर्दिव्यैः सिद्धिदं सुखमोक्षदम् । शुचिभिः प्रातरुत्थाय पठितव्यं समाहितैः । त्रिकालं श्रद्धया युक्तैर्नातः परतरः स्तवः ॥ अस्य श्रीभवानीनामसहस्रस्तवराजस्य, महादेवऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, आद्या शक्तिः, भगवती भवानी देवता, ह्रीं बीजं, श्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं, आत्मनो वाङ्मनःकायोपार्जितपापनिवारणार्थं, अमुककामनासिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः ॥ अथ करन्यासः ॥ ॐ एकवीरायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॐ महामायायै तर्जनीभ्यां नमः, ॐ पार्वत्यै मध्यमाभ्यां नमः, ॐ गिरिशप्रियायै अनामिकाभ्यां नमः, ॐ गौर्यै कनिष्ठिकाभ्यां नमः, करालिन्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ अथ षडङ्गन्यासः ॥ ॐ एकवीरायै हृदयाय नमः, ॐ महामायायै शिरसे स्वाहा, ॐ पार्वत्यै शिखायै वषट्, ॐ गिरिशप्रियायै कवचायहुम्, ॐ गौर्यै नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ करालिन्यै अस्त्रायफट् ॥ प्राणायामः ॥ ध्यानम् ॥ बालार्कमण्डलाभासं चतर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।

पाशाङ्कुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां भजे ॥१॥ अर्धेन्दुमौलिमलाममराभिवन्द्यामम्भोजपाशसृणिरक्तकपालहस्ताम्। रक्ताङ्गरागरशनाभरणां त्रिनेत्रां ध्याये शिवस्य वनितां मधुविह्वलाङ्गीम्॥ ॥ बीजत्रयाय विद्महे तत्प्रधानाय धीमहि, तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्।३। मूलम्। "ॐश्रींश्रींॐॐह्रींश्रींश्रीं भवानि हुं फट् स्वाहा" १०८ ॐसुभगायै विद्महे काममालिन्यै धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्॥ ॐ ॥ ३ ॥

॥ श्रीइश्वर उवाच ॥

ॐमहाविद्या जगन्माता महालक्ष्मी शिवप्रिया।
विष्णुमाया शुभा शान्ता सिद्धा सिद्धसरस्वती॥
क्षमा कान्तिः प्रभा ज्योत्स्ना पार्वती सर्वमङ्गला।
हिङ्गुला चण्डिका दान्ता पद्मा लक्ष्मीर्हरिप्रिया॥
त्रिपुरानन्दिनी नन्दा सुनन्दा सुरवन्दिता।
यज्ञविद्या महामाया वेदमाता सुधाधृतिः॥
प्रीतिप्रथा प्रसिद्धा च मृडानी विन्ध्यवासिनी।
सिद्धविद्या महाशक्तिः पृथ्वी नारदसेविता॥
पुरुहुतप्रिया कान्ता कामिनी पद्मलोचना।
प्रह्लादिनी महामाता दुर्गा दुर्गतिनाशिनी॥
ज्वालामुखी सुगोत्रा च ज्योतिः कुमुदहासिनी।

दुर्गमा दुर्लभा विद्या स्वर्गतिः पुरवासिनी ॥
अपर्णा शाम्बरी माया मदिरा मृदुहासिनी ।
कुलवागीश्वरी नित्यानित्यक्लिन्ना कृशोदरी ।
कामेश्वरी च नीला च भीरुण्डा वह्निवासिनी ।
लम्बोदरी महाकाली विद्याविद्येश्वरी तथा ॥
नरेश्वरी च सत्या च सर्वसौभाग्यवर्धिनी ।
सङ्कर्षणी नारसिंही वैष्णवी च महोदरी ॥
कात्यायनी च चम्पा च सर्वसम्पत्तिकारिणी ।
नारायणी महानिद्रा योगनिद्रा प्रभावती ॥
प्रज्ञापारमिता प्रज्ञा तारा मधुमती मधु ।
क्षीरार्णवसुधा हारा कालिका सिंहवाहना
ॐकारा वसुधाकारा चेतना कोपना कृतिः ।
अर्धबिन्दुधरा धारा विश्वमाता कलावती ॥
पद्मावती सुवस्त्रा च प्रबुद्धा च सरस्वती ।
कुण्डासना जगद्धात्री बुद्धमाता जनेश्वरी ॥
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हंसवाहना ।
राज्यलक्ष्मीवषट्कारा सुधाकारासुधात्मिका ॥
राजनीतिस्त्रयीवार्ता दण्डनीतिः क्रियावती ।
सद्भूतिस्तारिणी श्रद्धा सद्गतिः सत्परायणा
सिन्धुर्मन्दाकिनी गङ्गा यमुना च सरस्वती ।
गोदावरी विपाशा च कावेरी च शतद्रुका ।

सरयूश्चन्द्रभागा च कौशिकी गण्डकी शुचिः ।
नर्मदा कर्मनाशा च चर्मण्वत्यथ देविका ॥
वेत्रवती वितस्ता च वरदा नरवाहना ।
सती पतिव्रता साध्वी सुचक्षुः कुण्डवासिनी ॥
एकचक्षुः सहस्राक्षी सुश्रेणिर्भगमालिनी ।
सेनाश्रेणिः पताका च सुव्यूहा युद्धकाङ्क्षिणी ॥
पताकिनी दयारम्भा विपञ्ची पञ्चमप्रिया ।
परापरकलाकान्ता त्रिशक्तिर्मोक्षदायिनी ॥
ऐन्द्री माहेश्वरी ब्राह्मी कौमारी कुलवासिनी ।
इच्छा भगवती शक्तिः कामधेनुः कृपावती ॥
वज्रायुधा वज्रहस्ता चण्डी चण्डपराक्रमा ।
गौरी सुवर्णवर्णा च स्थितिसंहारकारिणी ।
एकानेका महेज्या च शतबाहुर्महाभुजा ।
भुजङ्गभूषणा भूषा षट्चक्रक्रमवासिनी ॥
षट्चक्रभेदिनी श्यामा कायस्था कायवर्जिता ।
सुस्मिता सुमुखी क्षामा मूलप्रकृतिरीश्वरी ॥
अजा च बहुवर्णा च पुरुषार्थप्रवर्तिनी ।
रक्ता नीला सिता श्यामा कृष्णा पीता च कर्बुरा ॥
क्षुधा तृष्णा जरा वृद्धा तरुणी करुणालया ।
कला काष्ठा मुहूर्ता च निमेषा कालरूपिणी ॥
सुकर्णरसना नासा चक्षुःस्पर्शवती रसा ।

गन्धप्रिया सुगन्धा च सुस्पर्शा च मनोगतिः ॥
मृगनाभिर्मृगाक्षी च कर्पूरामोदधारिणी ।
पद्मयोनिः सुकेशी च सुलिङ्गा भगरूपिणी ।
योनिमुद्रा महामुद्रा खेचरी खगगामिनी ।
मधुश्रीर्माधवीवल्ली मधुमत्ता मदोद्धता ॥
मातङ्गी शुकहस्ता च पुष्पबाणेक्षुचापिनी ।
रक्ताम्बरधरा क्षीबा रक्तपुष्पावतंसिनी ॥
शुभ्राम्बरधरा धीरा महश्वेता वसुप्रिया ।
सुवेणी पद्महस्ता च मुक्ताहारविभूषणा ॥
कर्पूरामोदनिःश्वासा पद्मिनी पद्ममन्दिरा ।
खड्गिनी चक्रहस्ता च भुसण्डी परिघायुधा ।
चापिनी पाशहस्ता च त्रिशूलवरधारिणी ।
सुबाणा शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ॥
वरायुधधरा वीरा वीरपानमदोत्कटा ।
वसुधा वसुधारा च जया शाकम्भरी शिवा ॥
विजया च जयन्ती च सुस्तनी शत्रुनाशिनी ।
अन्तर्वत्नी वेदशक्तिर्वरदा वरधारिणी ॥
शीतला च सुशीला च बालग्रहविनाशिनी ।
कुमारी च वसुपर्णा च कामाख्या कामवन्दिता ॥
जालन्धरधराऽनन्ता कामरूपनिवासिनी ।
कामबीजवती सत्या सत्यधर्मपरायणा ॥

स्थूलमार्गस्थिता सूक्ष्मा सूक्ष्मबुद्धिप्रबोधिनी ।
षट्कोणा च त्रिकोणा च त्रिनेत्रा त्रिपुरसुन्दरी
वृषप्रिया वृषारूढा महिषासुरघातिनी ।
सुम्भदर्पहरा दीप्ता दीप्तपावकसन्निभा ॥
कपालभूषणा काली कपालमालधारिणी ।
कपालकुण्डला दीर्घा शिवादूती घनध्वनिः ॥
सिद्धिदा बुद्धिदा नित्या सत्यमार्गप्रबोधिनी ।
कम्बुग्रीवा वसुमती छत्रच्छायाकृतालया ।
जगद्गर्भा कुण्डलिनी भुजगाकारशायिनी ।
प्रोल्लसत्सप्तपद्मा च नाभिनालमृणालिनी ॥
मूलाधारा निराकारा वह्निकुण्डकृतालया ।
वायुकुण्डसुखासीना निराधारा निराश्रया ॥
श्वासोच्छ्वासगतिर्जीवाग्राहिणी वह्निसंश्रया ।
वल्लीतन्तुसमुत्थाना षडसास्वादलोलुपा ॥
तपस्विनी तपःसिद्धि तापसी च तपः प्रिया ।
तपोनिष्ठा तपोयुक्ता तापसी च तपःप्रिया ॥
सप्तधातुमयी मूर्तिः सप्तधात्वन्तराश्रया ।
देहपुष्टिर्मनःतुष्टिरन्नपुष्टिर्बलोद्धता ।
ओषधिर्वैद्यमाता च द्रव्यशक्तिः प्रभाविनी ।
वैद्या वैद्यचिकित्सा च सुपथ्या रोगनाशिनी ॥ ५७
मृगया मृगमांसादा मृगत्वङ्मृगलोचना ।

वागुरा बन्धरूपा च वधरूपा वधोद्धता ॥
वन्दी वन्दिस्तुताकारा काराबन्धविमोचिनी ।
शृङ्खला खलहा विद्युद्दृढबन्धविमोचिनी ॥
अम्बिकाऽम्बालिका चाम्बा स्वक्षा साधुजनार्चिता ।
कौलिकी कुलविद्या च सुकुला कुलपूजिता ॥
कालचक्रभ्रमा भ्रान्ता विभ्रमा भ्रमनाशिनी ।
वात्याली मेघमाला च सुवृष्टिः सस्यवर्धिनी ॥
अकारा च इकारा च उकारैकाररूपिणी ।
ह्रींकारीबीजरूपा च क्लींकाराम्बरवासिनी ॥
सर्वाक्षरमयीमूर्तिरक्षरा वर्णमालिनी ।
सिन्दूरारुणवक्त्रा च सिन्दूरतिलकप्रिया ॥
वश्या च वश्यबीजा च लोकवश्यविभाविनी ।
नृपवश्या नृपैर्सेव्या नृपवश्यकरी प्रिया ॥
महिषी नृपमान्या च नृमान्या नृपनन्दिनी ।
नृपधर्ममयी धन्या धनधान्यदिवर्धिनी ॥
चतुर्वर्णमयी मूर्तिश्चतुर्वर्णैश्चपूजिता ।
सर्वधर्ममयी सिद्धिश्चतुराश्रमवासिनी ॥
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या शूद्रा चावरवर्णजा ।
वेदमार्गरता यज्ञा वेदविश्वविभाविनी ॥
अस्त्रशस्त्रमयीविद्या वरशस्त्रास्त्रधारिणी ।
सुमेधा सत्यमेधा च भद्रकाल्यऽपराजिता ॥

गायत्री सत्कृतिः सन्ध्या सावित्री त्रिपदाश्रया ।
त्रिसन्ध्या त्रिपदी धात्री सुपर्वा सामगायनी ॥
पञ्चाली चालिका बाला बालक्रीडा सनातनी ।
गर्भाधारधरा शून्या गर्भाशयनिवासिनी ॥
सुरारिघातिनी कृत्या पूतना च तिलोत्तमा ।
लज्जा रसवती नन्दा भवानी पापनाशिनी ॥
पट्टाम्बरधरा गीतिः सुगीतिर्ज्ञानलोचना ।
सप्तस्वरमयी तन्त्री षड्जमध्यमधैवता ॥
मूर्छना ग्रामसंस्थाना स्वस्था स्वस्थानवासिनी ।
अट्टाट्टहासिनी प्रेता प्रेतासननिवासिनी ।
गीतनृत्तप्रिया कामा तुष्टिदा पुष्टिदा क्षया ।
निष्ठा सत्यप्रिया प्रज्ञा लोकेशी च सुरोत्तमा ॥
सविषा ज्वालिनीज्वाला विषमोहार्त्तिनाशिनी ।
विषारिर्नागदमनी कुरुकुल्लाऽमृतोद्भवा ॥
भूतभीतिहरा रक्षा भूतावेशविनाशिनी ।
रक्षोघ्नी राक्षसीरात्रिर्दीर्घनिद्रा दिवागतिः ॥
चन्द्रिका चन्द्रकान्तिश्च सूर्यकान्तिर्निशाचरी ।
डाकिनी शाकिनी शिष्या हाकिनी चक्रवाकिनी ॥
सितासितप्रिया स्वङ्गा सुकुला वनदेवता ।
गुरुरूपधरा गुर्वी मृत्युर्मारी विशारदा ॥
महामारी विनिन्द्रा च तन्द्रा मृत्युविनाशिनी ।

चन्द्रमण्डलसङ्काशा चन्द्रमण्डलवासिनी ॥
अणिमादिगुणोपेता सुस्पृहा कामरूपिणी ।
अष्टसिद्धिप्रदा प्रौढा दुष्टदानवघातिनी ॥
अनादिनिधना पुष्टिश्चतुर्बाहुश्चतुर्मुखी ।
चतुःसमुद्रशयना चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
काशपुष्पप्रतीकाशा शरत्कुमुदलोचना ।
भूता भव्या भविष्या च शैलजा शैलवासिनी ॥
वाममार्गरता वामा शिववामाङ्गवासिनी ।
वामाचारप्रिया तुष्टा लोपामुद्राप्रबोधिनी ॥
भूतात्मा परमात्मा च भूतभावविभाविनी ।
मङ्गला च सुशीला च परमार्थप्रबोधिका ॥
दक्षिणा दक्षिणामूर्तिः सुदक्षिणा हरिप्रिया ।
योगिनी योगियुक्ता च योगाङ्गा ध्यानशालिनी ॥
योगपट्टधरामुक्ता मुक्तानां परमागतिः ।
नारसिंही सुजन्मा च त्रिवर्गफलदायिनी ॥
धर्मदा धनदा चैवा कामदा मोक्षदा द्युतिः ।
साक्षिणी क्षणदा दक्षा दक्षजा कोटिरूपिणी ॥
क्रतुः कात्यायनी स्वच्छा स्वच्छन्दा च कविप्रिया ।
सत्यागमा बहिःस्था च काव्यशक्तिः कवित्वदा ॥
मेनापुत्री सतीमाता मैनाकभगिनी तडित् ।
सौदामिनी सुदामा च सुदामा धामशालिनी ॥

सौभाग्यदायिनी द्यौश्च सुभगा द्युतिवर्धिनी ।
श्रीकृत्तिवसना चैव कङ्काली कलिनाशिनी ॥
रक्तबीजवधोद्दृप्ता सुतन्तुर्बीजसन्ततिः ।
जगज्जीवा जगद्बीजा जगत्त्रयहितैषिणी ॥
चामीकररुचिश्चान्द्री साक्षया षोडशीकला ।
यत्तत्पदानुबन्धा च यक्षिणी धनदार्चिता ॥
चित्रिणी चित्रमाया च विचित्रा भुवनेश्वरी ।
चामुण्डा मुण्डहस्ता च चण्डमुण्डवधोद्धुरा ॥
अष्टम्येकादशी पूर्णा नवमी च चतुर्दशी ।
अमा कलशहस्ता च पूर्णकुम्भधराधरा ॥
अभीरुर्भैरवी भीमा भीरा त्रिपुरभैरवी ।
महारुण्डा च रौद्री च महाभैरवपूजिता ॥
नर्मुण्डा हस्तिनी चण्डा करालदशनानना ।
कराला विकराला च घोराघुर्घुरनादिनी ॥
रक्तदन्तोर्ध्वकेशी च बन्धूककुसुमारुणा ।
कादम्बरी पटासा च काश्मीरी कुङ्कुमप्रिया ॥
क्षान्तिर्बहुसुवर्णा च मतिर्बहुसुवर्णदा ।
मातङ्गिनी वरारोहा मत्तमातङ्गगामिनी ॥
हिंसा हंसगतिर्हंसी हंसोज्ज्वलशिरोरुहा ।
पूर्णचन्द्रमुखी श्यामा स्मितास्या श्यामकुण्डला ॥
मषी च लेखनी लेखा सुलेख्या लेखकप्रिया ।

हसमता
शङ्खिनी शङ्खहता च जलस्था जलदेवता ॥
कुरुक्षेत्रावनिः काशी मथुरा काञ्च्यवन्तिका ।
अयोध्या द्वारकामाया तीर्था तीर्थकरप्रिया ॥
त्रिपुष्कराऽप्रमेया च कोशस्था कोशवासिनी ।
कौशिकी तु कुशावर्ता कोशाम्बी कोशवर्धिनी ॥
कोशदा पद्मकोशाक्षी कुसुमा कुसुमप्रिया ।
तोतुला च तुलाकोटिः कूटस्था कोटराश्रया ॥
स्वयम्भूश्च सुरूपा च स्वरूपा रूपवर्धिनी ।
तेजस्विनी सुभिक्षा च बलदा बलदायिनी ॥
महाकोशी महावर्त्ता बुद्धिः सदसदात्मिका ।
महाग्रहहरा सौम्या विशोका शोकनाशिनी ॥
सात्त्विकी सत्त्वसंस्था च राजसी च रजोवृता ।
तामसी च तमोयुक्ता गुणत्रयविभाविनी ॥
अव्यक्ता व्यक्तरूपा च वेदविद्या च शाम्भवी ।
शंकराकल्पिनी कल्पा मनःसङ्कल्पसन्ततिः ॥
सर्वलोकमयी शक्तिः सर्वश्रवगोचरा । सर्वश्रवणगोचरा
सर्वज्ञानवती वाञ्छा सर्वतत्त्वावबोधिनी ॥
जाग्रती च सुषुप्तिश्च स्वप्नावस्था तुरीयका ।
त्वरा मन्दगतिर्मन्दा मदिरामोदधारिणी ॥
पानभूमिः पानपात्रा पानदानकरोद्यता ।
अघूर्णारुणनेत्रा च किञ्चिदव्यक्तभाषिणी ॥

आशापूरा च दीक्षा च दक्षा दीक्षितपूजिता ।
नागवल्ली नागकन्या भोगिनी भोगवल्लभा ॥
सर्वशास्त्रवती विद्या सुस्मृतिर्धर्मवादिनी ।
श्रुतिः श्रुतिधरा ज्येष्ठा श्रेष्ठा पातालवासिनी ॥
मीमांसा तर्कविद्या च सुभक्तिर्भक्तवत्सला ।
सुनाभिर्यातना जातिर्गम्भीराभाववर्जिता ॥
नागपाशधरा मूर्तिरगाधा नागकुण्डला ।
सुचक्रा चक्रमध्यस्था चक्रकोणनिवासिनी ॥
सर्वमन्त्रमयी विद्या सर्वमन्त्राक्षरावलिः ।
मधुस्रवा स्रवन्ती च भ्रामरी भ्रमरालका ॥
मातृमण्डलमध्यस्था मातृमण्डलवासिनी ।
कुमारजननी क्रूरा सुमुखी ज्वरनाशिनी ॥
अतीता विद्यमाना च भाविनी प्रीतिमञ्जरी ।
सर्वसौख्यवती युक्तिराहारपरिणामिनी ॥
निदानं पञ्चभूतानां भवसागरतारिणी ।
अक्रूरा च ग्रहवती विग्रहा ग्रहवर्जिता ॥
रोहिणी भूमिगर्भा च कालभूः कालवर्तिनी ।
कलङ्करहिता नारी चतुष्षष्ट्यभिधावती ॥
जीर्णा च जीर्णवस्त्रा च नूतना नववल्लभा ।
अजरा च रतिः प्रीतिरतिरागविवर्धिनी ॥
पञ्चवातगतिर्भिन्ना पञ्चश्लेष्माशयाधरा ।

पञ्चपित्तवती शक्तिः पञ्चस्थानविभाविनी ॥
उदक्यामत वृषस्पन्ती बहिःप्रस्रविणी त्र्यहा ।
रजःशुक्रधराशक्तिर्जरायुर्गर्भधारिणी ॥
त्रिकालज्ञा त्रिलिङ्गा च त्रिमूर्तिः त्रिपुरवासिनी ।
अरागा शिवतत्त्वा च कामतत्त्वानुरागिणी ॥
प्राच्यवाची प्रतीचीदिगुदीचीदिग्विदिदिशाम् ।
अहंकृतिरहंकारा बलिमाया बलिप्रिया ॥
स्रुक्स्रुवा सामिधेनी च सश्रद्धा श्राद्धदेवता ।
माता मातामही तृप्तिः पितृमाता पितामही ॥
स्नुषा दौहित्रिणी पुत्री पौत्री शिशुप्रिया ।
स्तनदा स्तनधारा च विश्वयोनिः स्तनन्धयी ॥
शिशूत्सङ्गधरा दोला दोलाक्रीडाभिनन्दिनी ।
उर्वशी कदली केका विशिखा शिखिनर्तिनी ॥
खट्वाङ्गधारिणी खट्वा बाणपुङ्खानुवर्तिनी ।
लक्ष्यप्राप्तिः कला लक्ष्या लक्ष्या च शुभलक्षणा ॥
वर्तिनी सुपथाचारा परिखा च खनिर्वृतिः ।
प्राकारवलया वेला मर्यादा च महोदधौ ॥
पोषणी शोषणीशक्तिर्दीर्घकेशी सुलोमशा ।
ललिता मांसला तन्वी वेदवेदाङ्गधारिणी ॥
नरासृक्पानमत्ता च नरमुण्डास्थिभूषणा ।
अक्षक्रीडारतिः शारी शारिका शुकभाषिणी ॥ १२१

शाम्बरी गारुडीविद्या वारुणी वरुणार्चिता ।
वाराही मुण्डहस्ता च दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरा ॥
मीनमूर्तिधरा मूर्त्ता वदन्या प्रतिमाश्रया ।
अमूर्त्ता निधिरूपा च सालिग्रामशिला शुचिः ॥
स्मृतिः संस्काररूपा च सुसंस्कारा च संस्कृतिः ।
प्राकृता देशभाषा च गाथा गीतिः प्रहेलिका ॥
इडा च पिङ्गला पिङ्गा सुषुम्णा सूर्यवाहिनी ।
शशिस्रवा च तालुस्था काकिन्यमृतजीविनी ॥
अणुरूपा बृहद्रूपा लघुरूपा गुरुस्थिरा ।
स्थावरा जङ्गमा देवी कृतकर्मफलप्रदा ॥
विषयाक्रान्तदेहा च निर्विशेषा जितेन्द्रिया ।
विश्वरूपा चिदानन्दा परंब्रह्मप्रबोधिनी ॥
निर्विकारा च निर्वैरा विरतिः सत्यवर्धिनी ।
पुरुषाज्ञाच भिन्ना च क्षान्तिः कैवल्यदायिनी ॥
विविक्तसेविनी प्रज्ञाजनयित्री बहुश्रुतिः ।
निरीहा च समस्तैका सर्वलोकैकसेविता ॥
सेवा सेवाप्रिया सेव्या सेवाफलविवर्धिनी ।
कलौ कल्किप्रिया काली दुष्टम्लेच्छविनाशिनी ॥
प्रत्यञ्चा च धनुर्यष्टिः खड्गधारा दुरानतिः ।
अश्वप्लुतिश्च वल्गा च सृणिः सन्मत्तवारणा ॥
वीरभूर्वीरमाता च वीरसूर्वीरनन्दिनी ।

जयश्रीर्जयदीक्षा च जयदा जयवर्धिनी ॥
सौभाग्यसुभगाकारा सर्वसौभग्यवर्धिनी ।
क्षेमङ्करी सिद्धिरूपा सत्कीर्तिः पथिदेवता ॥
सर्वतीर्थमयीमूर्तिः सर्वदेवमयीप्रभा ।
सर्वसिद्धिप्रदाशक्तिः सर्वमङ्गलमङ्गला ॥ १००० ॥

पुण्यं सहस्रनामेदमम्बाया रुद्रभाषितम्। चतुर्वर्गप्रदं सत्यं नन्दिकेन प्रकाशितम् ॥ नातः परतरो मन्त्रो नातः परतरः स्तवः । नातः परतरा विद्या तीर्थं नातः परं परम् ॥ ते धन्याः कृतपुण्यास्ते त एव भुवि पूजिताः । एकभावं मुदा नित्यं येऽर्चयन्ति महेश्वरीम् ॥ देवतानां देवता या ब्रह्माद्यैर्या च पूजिता । भूयात्सा वरदा लोके साधूनां विश्वमङ्गला ॥ एतामेव पुराराध्य विद्यां त्रिपुरभैरवीम् । त्रैलोक्यमोहनं रूपमकार्षीद्भगवद्धरिः ॥ मायाकुण्डलिनी० अनेन मन्त्रपाठेन आत्मनो० इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे नन्दिकेश्वरसंवादे महाप्रभावो भवानीनामसहस्रस्तवराजः समाप्तः ॥

अथ इन्द्राक्षीस्तोत्रम् ॥

ॐ अस्य श्रीइन्द्राक्षीस्तोत्रमन्त्रस्य, पुरन्दर ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीइन्द्राक्षीभगवती देवता, भुवनेश्वरी शक्तिः, माहेश्वरी कीलकं, गायत्री सावित्री सरस्वती कवचं, आत्मनो वाङ्मनः-कायोपार्जितपापनिवारणार्थं अमुककामनासिद्ध्यर्थं पाठे विनियोगः ॥

लक्ष्म्यै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, भुवनेश्वर्यै तर्जनीभ्यां नमः, माहेश्वर्यै मध्यमाभ्यां नमः, वज्रहस्तायै अनामिकाभ्यां नमः, सहस्रनयनायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॥ इन्द्राक्षीभगवत्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इति करन्यासः ॥ अथ षडङ्गन्यासः ॥ लक्ष्म्यै हृदयाय नमः, भुवनेश्वर्यै शिखायै वषट्, वज्रहस्तायै कवचाय हुं, सहस्रनयनायै नेत्राभ्यां वौषट्, इन्द्राक्षीभगवत्यै अस्त्राय फट् ॥प्राणायामः ॥ ध्यानम् ॥

ॐ इन्द्राक्षीं द्विभुजां देवीं पीतवस्त्रधरां शुभाम् ।
वामे वज्रधरां सव्यहस्तेऽभयवरप्रदाम् ॥
सहस्रनेत्रां सूर्याभां नानालङ्कारभूषिताम् ।
प्रसन्नवदनां नित्यामप्सरोगणसेविताम् ॥
श्रीदुर्गां सौम्यवदनां पाशाङ्कुशधरां पराम् ।
त्रैलोक्यमोहिनीं देवीं भवानीं प्रणमाम्यहम् ।

इन्द्र उवाच

इन्द्राक्षी नाम सा देवी देवता समुदाहृता ।
गौरी शाकम्भरी देवी दुर्गानाम्नेति विश्रुता ॥
कात्यायनी महादेवी चण्डघण्टा महातपाः ।
सावित्री सा च गायत्री ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी ॥
नारायणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्णपिङ्गला ।

अग्निज्वाला रुद्रमुखी कालरात्री तपस्विनी ॥
मेघश्यामा सहस्राक्षी विष्णुमाया जलोदरी ।
महोदरी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला ॥
आनन्दा भद्रजानन्ता रोगहर्त्री शिवप्रिया ।
शिवदूती शिवादूती कराली च प्रत्यक्षा परमेश्वरी ॥
इन्द्राणी चेन्द्ररूपा च इन्द्रशक्ति परायणा ।
महिषासुरसंहर्त्री चामुण्डा गर्भदेवता ॥
वाराही नारसिंही च भीमा भैरवनादिनी ।
श्रुतिः स्मृतिर्धृतिर्मेधाः विद्या लक्ष्मीः सरस्वती ॥
अनन्ता विजया पूर्णा मनस्तोषाऽपराजिता ।
भवानी पार्वती दुर्गा हैमवत्यम्बिका शिवा ॥
शिवा भवानी रुद्राणी शङ्करार्धशरीरिणी ॥ ॥
एतैर्नामपदैर्दिव्यैः स्तुता शक्रेण धीमता ।
आयुरारोग्यमैश्वर्याऽक्षयसम्पत्तिकारकम् ॥
क्षयापस्मारकुष्ठादितापज्वरनिवारकम् ।
शतमावर्तयेद्यस्तु मुच्यते व्याधिबन्धनात् ॥
आवर्तयेत्सहस्रेण लभते वाञ्छितं फलम् ।
राजा वशमवाप्नोति सत्यमेव न संशयः ॥
लक्षमेकं जपेद्यस्तु साक्षाद्देवीं स पश्यति ।
त्रिकालं पठतिनित्यं धनधान्यांश्च सम्पदः ॥
अर्धरात्रे पठन्नित्यं मुच्यते व्याधिबन्धनात् ।

ऐन्द्रस्तोत्रमिदं पुण्यं जपे तु फलवर्धनम् ॥
विनाशाय तु रोगाणामपमृत्युं हरत्युत ।
राज्यार्थी लभते राज्यं धनार्थी विपुलं धनम् ॥
इच्छाकामं तु कामार्थी धर्मार्थी धर्ममव्ययम् ।
विद्यार्थी लभते विद्यां मोक्षार्थी परमं पदम् ॥
इन्द्रेण कथितं स्तोत्रं सत्यमेव न संशयः ॥ ॥

या माया मधुकैटभप्रमथिनी या माहिषोन्मूलिनी
या धूम्रेक्षणचण्डमुण्डमथिनी या रक्तबीजाशनी ।
शक्तिः शुम्भनिशुम्भदैत्यदलिनी या सिद्धलक्ष्मीः परा
सा देवी नवकोटिमूर्तिसहिता मां पातु माहेश्वरी ॥
जप्तं पापहरं नुतं बलकरं सम्पूजितं श्रीकरं
ध्यातं मानकरं स्तुतं धनकरं सम्भाषितं सिद्धिदम् ।
गीतं सुन्दरि वाञ्छितं प्रतनुते ते पादपद्मद्वयं
भक्तानां भवभीतिभञ्जनकरं सिद्ध्यष्टदं पातु नः ॥

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी ह्रींकारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि । अनेन मन्त्रपाठेन आत्मनो वाङ्मनःकायोपार्जितपापनिवारणार्थं श्रीइष्टदेवीप्रीत्यर्थं भगवती आमा कामा चार्वङ्गी टङ्कधारिणी तारा पार्वती यक्षिणी श्रीशारिकाभगवती श्रीशारदा-

भगवती श्रीमहाराज्ञी भगवती श्रीज्वालाभगवती भेडाभगवती वैखरीभगवती वितस्ताभगवती गङ्गाभगवती यमुनाभगवती कालिकाभगवती सिद्धलक्ष्मीः महालक्ष्मीः महात्रिपुरसुन्दरी सहस्रनाम्नी देवी भवानी सपरिवारा सवाहना सायुधा साङ्गा प्रीयन्तां प्रीताः सन्तु ॥ इति इन्द्राक्षीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

सृष्टौ संस्थापनाय त्वऽपहरणविधौ मोहनेऽनुग्रहेषि सर्वेषामर्गलानां निजमहिमवशादक्रमेणैव याऽलम् । नित्यं क्रीडाप्रसक्ता रचयति सकलं स्वात्मशक्तया प्रपञ्चं सा नस्त्राणाय भूयादऽभिमतफलदा भद्रकाली च काली ॥ कालाम्बुवाहद्युतिमिन्दुवक्त्रां तारावलींशोभिपयोधराढ्याम् । कपालपाशांकुशशूलहस्तां नीलाम्बरां यामवतीं नमामि ॥ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुसुण्डीं शिरः शङ्खं च सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् । यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभं नीलाश्मद्युतिमाऽस्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम् ॥ अक्षस्रक्परशूगदेषुकुलिशान्पद्मं धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलदं घण्टां सुराभाजनम् । शूलं पाशसुदर्शनौ च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभैः सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम् । हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे

समन्दस्मिताम् ॥ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुलेखां शङ्खं चक्रं कृपाणीं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् । सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥१३०॥ घंटाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं धनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् । गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे सुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्या चतुर्भिर्भुजैः शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता । आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीक्वणन्नूपुरा दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुण्डला । ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजे शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम् । कल्हाराबद्धमालानियमितविलसच्चूलिकां रक्तवस्त्रां मातङ्गीं शङ्खपात्रां मधुमदविवशां चित्रकोद्भासिभालाम् ॥ नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरुरत्नावलीभास्वद्देहलतां विभाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम् । मालाकुम्भकपालनीरजकरां चन्द्रार्धमौलिं परां सर्वेशेश्वरभैरवाङ्कनिलयां पाद्मावतीं चिन्तयेत् ॥ बन्धूककाञ्चननिभांरुचिराक्षमालां पाशाङ्कुशौ च वरदं निजबाहुदण्डैः । बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥ उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्निनेत्रां धनुःशरयुताङ्कुशकामपाशान् । रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम् ॥ उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।

स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाऽभीतिकरां प्रभंजे भुवनेशीम्। विद्युद्दाम-समप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां कन्याभिः करवालखेटविल-सद्धस्ताभिरासेविताम्। हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां स्मरे। बालार्कमण्डला-भासंचतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्। पाशाङ्कुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां भजे॥ पद्मासनस्थां करपङ्कजाभ्यां रक्तोत्पले सन्दधतीं त्रिनेत्राम् सम्बिभ्रतीमाभरणानि रक्तां पद्मावतीं पद्ममुखीं नमामि॥१४०॥

अथ शङ्कराचार्यकृता सौन्दर्यलहरी॥

ॐनमश्चिच्छक्तयै॥ शिवः शक्तया युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि। अतस्त्वामा-राध्यां हरिहरविरिञ्च्यादिभिरपि प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति।१। तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं विरिञ्चिः सं-चिन्वन्विरचयति लोकानऽविकलम्। वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोद्धूलनविधिम्।२। अविद्यानामऽन्तस्तिमिरमिहिरोद्दीपनकरी जडानां चैतन्यस्तवकमकर-न्दस्रुतिसिरा। दरिद्राणां चिन्ता मणिगुणनिका जन्मजलधौ नि-मग्नानां दंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवती।३। त्वदन्यः पाणिभ्यामभय-वरदो दैवतगणस्त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया। भया-त्त्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छासमधिकं शरण्ये लोकानां तव हि

चरणावेव निपुणौ ॥४॥ हरिस्त्वामाराध्य प्रणतजनसौभाग्यजननीं पुरा नारी भूत्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत् । स्मरोपि त्वां नत्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा मुनीनामप्यन्तः प्रभवति हि मोहाय महताम् ॥५॥ धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्च विशिखा वसन्तः सामन्तो मलयमरुदाऽयोधनरथः । तथाप्येकः सर्वं हिमगिरिसुते कामपि कृपामपाङ्गात्ते लब्ध्वा जगदिदमनङ्गो विजयते ॥६॥ क्वणत्काञ्ची-दामा करिकलभकुम्भस्तनभरा परिक्षीणा मध्ये परिणतशरच्चन्द्रवदना । धनुर्बाणान्पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः पुरस्तादाऽस्तां नः पुर-मथितुराहोपुरुषिका ॥७॥ सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटपिवाटीपरिवृते मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे । शिवाकारे मञ्चे परम-शिवपर्यङ्कनिलयां भजन्ती त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ॥८॥ महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहस्थितिं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि । मनोपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि ॥९॥ सुधाधारासारैश्चरण-युगलान्तर्विगलितैः प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसाम्नायमहसा । अवा-प्य स्वां भूमिं भुजगनिभमध्युष्टवलयं स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणि ॥१०॥ चतुर्भिः श्रीकण्ठैः शिवयुवतिभिः । पञ्चभिरथो प्रभिन्नाभिः शम्भोर्नवभिरिति मूलप्रकृतिभिः । त्रयश्चत्वा-रिंशद्वसुदलकलाश्रत्रिवलयत्रिरेखाभिः सार्धं तव भुवनकोणाः परि-णताः ॥११॥ त्वदीयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये तुलयितुं कवीन्द्राः कल्पन्ते कथमपि विरिञ्चिप्रभतयः । यदालोक्यौत्सुक्यादमरललना

यान्ति मनसा तपोभिर्दुष्प्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीम् ॥१२॥ नरं वर्षीयांसं नयनविरसं नर्मसु जडं तवापाङ्गालोके पतितमनुधावन्ति शतशः । गलद्वेणीबन्धा कुचकलशविस्रस्तसिचया हठात्त्रुट्यत्काञ्च्यो विगलितदुकूला युवतयः ॥१३॥ क्षितौ षट्पञ्चाशद्द्विसमधिकपञ्चाशदुदके हुताशे द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले । दिवि द्विःषट्त्रिंशन्मनसि च चतुःषष्टिरिति ये मयूखास्तेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥१४॥ शरज्ज्योत्स्नाशुभ्रां शशियुतजटाजूटमुकुटां वरत्रासत्राणस्फटिकघुटिकापुस्तककराम् । सकृन्नत्वा न त्वां कथमिव सतां सन्निदधते मधुक्षीरद्राक्षामधुरिमधुरीणा भणितयः ॥१५॥ कवीन्द्राणां चेतःकमलवनबालातपरुचिं भजन्ते ये सन्तः कतिचिदरुणामेव भवतीम् । विरिञ्चिप्रेयस्यास्तरलतरशृङ्गारलहरीगभीराभिर्वाग्भिर्विदधति सतां रञ्जनममी ॥१६॥ तनुच्छायाभिस्ते तरुणतरणिश्रीसरणिभिर्दिवं सर्वामुर्वीमरुणिमनिमग्नां स्मरति यः । भवन्त्यस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः सहोर्वश्या वश्याः कतिकति न गीर्वाणगणिकाः ॥१७॥ मुखं बिन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो हरार्धं ध्यायेद्यो हरमहिषि ते मन्मथकलाम् । स सद्यः संक्षोभं नयति वनिता इत्यतिलघु त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रवीन्दुस्तनयुगाम् ।१८। किरन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरम्बामृतरसं हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तिमिव यः । स सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव ज्वरप्लुष्टं दृष्ट्या सुखयति सुधासारसिरया ॥१९॥ तडिल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं निषण्णां षण्णामप्युपरि कमलानां तव कलाम्।

महापद्माटव्यां मृदितमलमायेन मनसा महान्तः पश्यन्तो दधति परमाह्लादलहरीम् ॥२०॥ सवित्रीभिर्वाचां शशिमणिशिलाभङ्गिरुचिभिर्वशिन्याद्याभिस्त्वां सह जननि संचिन्तयति यः। स कर्ता काव्यानां भवति कविताभङ्गिसुभगैर्वचोभिर्वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरैः ॥२१॥ भवानी त्वां दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणामिति स्तोतुं वाञ्छन्कथयति भवरनि त्वमिति यः। तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥२२॥ त्वया हृत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा शरीरार्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हृतमभूत्। तथाहि त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ॥२३॥ जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षिपयते तिरस्कुर्वन्नैतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति। सदापूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिवस्तवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥२४॥ त्रयाणां देवानां त्रिगुणजनितानां परशिवे भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता। तथाहि त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥२५॥ विरिञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति हरिराप्नोति विरतिं विनाशं कीनाशो भजति धनदो याति निधनम्। वितन्द्रा माहेन्द्री विततिरपि संमीलति दृशां महासंहारेऽस्मिन्विलसति सति त्वत्पतिरसौ ॥२६॥ जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचनं गतिः प्रादक्षिण्यक्रमणमशनाद्याहुतिविधिः। प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदृशा सपर्या पर्यायस्तव भवतु यन्मे विलसितम् ॥२७॥ ददाने दीनेभ्यः श्रियमनिशमाशानुसदृशीम-

मन्दं सौन्दर्यप्रकरमकरन्दं विकिरति । तवास्मिन्मन्दारस्तवकसुभगे
यातु चरणे निमज्जन्मज्जीवः करणचरणैः षट्चरणताम् ॥२८॥ सु-
धामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरणीं विपद्यन्ते विश्वे विधिशतमु-
खाद्या दिविषदः । करालं यत्क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना न
शम्भोस्तन्मूलं जननि तव ताटङ्कमहिमा ॥२९॥ किरीटं वैरिञ्चं
परिहर पुरः कैटभभिदः कठोरे कोटीरे स्खलसि जहि जम्भारिमुकु-
टम् । प्रणम्रेष्वेतेषु प्रसभमभियातस्य भवनं हरस्याभ्युत्थाने तव परि-
जनोक्तिर्विजयते ॥३०॥ चतुःषष्ट्या तन्त्रैः सकलमभिसन्धाय भुवनं
स्थितस्तत्तत्सिद्धिप्रसवपरतन्त्रैः पशुपतिः । पुनस्त्वन्निर्बन्धादऽखिल-
पुरुषार्थैकघटनास्स्वतन्त्रं ते तन्त्रं क्षितितलमऽवातीतरदिदम् ॥३१॥
शिवः शक्तिः कामः क्षितिरथ रविः शीतकिरणः स्मरो हंसः शक्र-
स्तदनु च परामारहरयः । अमी हृल्लेखाभिस्तसृभिरवसानेषु घटिता
भजन्ते वर्णास्ते तव जननि नामावयवताम् ॥३२॥ स्मरं योनिं
लक्ष्मीं त्रितयमिदमादौ तव मनोर्विधायैके नित्ये निरवधिमहाभोग-
रसिकाः । जपन्ति त्वां चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षवलयाः शिवाग्नौ
जुह्वन्तः सुरभिघृतधाराहुतिशतैः ॥३३॥ शरीरं त्वं शम्भोः शशि-
मिहिरवक्षोरुहयुगं तवात्मानं मन्ये भगवति नवात्मानमनघम् । अतः
शेषः शेषीत्ययमुभयसाधारणतया स्थितः सम्बन्धो वां समरसपदा-
नन्दपरयोः ॥३४॥ मनस्त्वं व्योम त्वं मरुदसि मरुत्सारथिरसि
त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां नहि परम् । त्वमेव स्वात्मानं
परिणमयितुं विश्ववपुषा चिदानन्दाकारं हरमहिषिभावेन बिभृषे ।३५।

तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटिद्युतिधरं परं शम्भुं वन्दे परिमिलित-पार्श्वं परचिता। यमाराध्यन्भक्त्या रविशशिशुचीनामविषये निरालोके लोको निवसति हि भालोकभवने ॥३६॥ विशुद्धौ ते शुद्ध-स्फटिकसदृशं व्योमजनकं शिवं सेवे देवीमपि शिवसमानव्यसनिनीम्। ययोः कान्त्या यात्या शशिकिरणसारूप्यसरणिर्विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगती ॥३७॥ समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं भजे हंसद्वन्द्वं किमपि महतां मानसचरम्। यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणतिर्यदादत्ते दोषाद्गुणमखिलमद्भ्यः पय इव ॥३८॥ तव स्वाधिष्ठाने हुतवहमधिष्ठाय निभृतं तमीडे संवर्तं जननि महतीं तां च समयाम्। यदालोके लोकान्दहति महति क्रोधकलिले दयार्द्रा त्वद्दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति ॥३९॥ तडित्वन्तं शक्त्या तिमिरपरिपन्थिस्फुरणया स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषम्। तव श्यामं मेघं कमपि मणिपूरैकशरणं निषेवे वर्षन्तं हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम ॥४०॥ तवाधारे मूले सह समयया लास्यपरया नवात्मानं वन्दे नवरसमहाताण्डवनटम्। उभाभ्यामेताभ्यामुदयविधिमुद्दिश्य दयया सनाथाभ्यां जज्ञे जनकजननीमज्जगदिदम् ॥४१॥ दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे। अनेनायं धन्यो भवति नच ते हानिरियता वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥५७॥ श्रुतीनां मूर्धानो दधति तव यौ शेखरतया ममाप्येतौ मातः शिरसि दयया धेहि चरणौ। ययोः पाद्यं पाथः पशुपतिजटाजूटतटिनी ययोर्लाक्षालक्ष्मीररुणहरिचूडामणिरुचिः ८३

कृपापाङ्गालोकं वितर सहसा साधुचरिते न ते युक्तोपेक्षा मयि शरणदीक्षामुपगते । न चेदिष्टं दद्यादनुपदमहो कल्पलतिका विशेषः सामान्यैः कथमितरवल्लीपरिकरैः ॥ अयः स्पर्शे लग्नं सपदि लभते हेमपदवीं यथा रथ्यापाथः शुचि भवति गाङ्गौघमिलितम् । तथा तत्तत्पापैरतिमलिनमन्तर्यदि मम त्वयि प्रेम्णा सक्तं कथमिव न जायेत विमलम् ॥

विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥
जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥

दुर्गां त्वां च सरस्वतीं भगवतीं ज्वालामुखीं शारदां राज्ञीं शारिकया युतामघहरीं त्वां भद्रकालीं शिवाम् । वागीशीं त्रिपुरां

भजामि समयां पीठेश्वरीं सिद्धिदां गायत्रीं कमलासनस्य वनितां श्रीकुब्जिकां कालिकाम् ॥८०॥ तत्र न का किल स्तुतिरम्बिके सकलशब्दमयी किल ते तनुः । निखिलमूर्तिषु मे भवदन्वयो मनसिजासु बहिष्प्रसरासु च ॥

श्रीराजराजेश्वरी स्तुतिः

ॐ नमो भवान्यै

ॐ छन्दःपादयुगा निरुक्तसुमुखा शिक्षा च जंघायुगा ऋग्वेदोरुयुगा युजुःसुजघना या सामवेदोदरा । तर्कन्यायकुचा श्रुतिस्मृतियुक् काव्यादिवेदानना वेदान्तामृतलोचना भगवती श्रीराजराजेश्वरी ॥१॥ ईशाधीश्वरयोगिवृन्दविधृता स्वानन्दभूता परा पश्यन्तीत्यनुमध्यमा विलसती श्रीवैखरीरूपिणी । आत्मानात्मविचारिणी त्रिनयना विद्यावती भारती श्रीचक्रप्रियबिन्दुतर्पणपरा श्रीराजराजेश्वरी ॥२॥ कल्याणायुतपूर्णबिम्बवदना पूर्णेश्वरी नन्दिनी पूर्णा पूर्णतरा परेशमहिषी पूर्णामृतास्वादिनी । सम्पूर्णा परमोत्तमामृतकला विद्यावती भारती श्रीचक्र० ॥३॥ एकाकारमनेकवर्णविविधाकारैकचिद्रूपिणी चैतन्यात्मकएकचक्ररचिता चक्रीश्वएकाकिनी । भावाभावविभाविनी भयहरा सद्भक्तचिन्तामणिः श्रीचक्र० ॥४॥ लक्ष्यालक्ष्यनिरीक्षणा निरुपमा रुद्राक्षमालाधरा साक्षात्कारणदक्ष-

वंशकलिता दीर्घातिदीर्घेश्वरी । भद्रा भद्रवरप्रदा भगवती भद्रेश्वरी भद्रदा श्रीचक्र० ॥५॥ ह्रींबीजानजनादबिन्दुभरिता सत्कार(ओंकार) नादात्मिका ब्रह्मानन्दघनोदरी गुणवती ज्ञानेश्वरी ज्ञानदा । इच्छाज्ञानक्रियावती जितवती गन्धर्वसंसेविता श्रीचक्र० ॥६॥ हर्षोन्मत्तसुवर्णपात्रभरिता पार्श्वोन्नता घूर्णिता हुंकारप्रियशब्दब्रह्म (राशि) निरता स्वारस्वतोल्लासिनी । सारासारविचारचारुचरिता वर्णाश्रमाकारिणी श्रीचक्र० ॥७॥ सर्वज्ञानकलावती सकरुणा सह्लादिनी नन्दिनी सर्वान्तर्गतशालिनी शिवतनूसन्दीपिनी दीपिनी । संयोगप्रियरूपिणी प्रियवती प्रीता प्रतापोन्नता श्रीचक्र० ॥८॥ कर्माकर्मविवर्जिता कुलवती कर्मप्रदा कौलिनी कारुण्यावधि सर्वकर्मनिरता सिन्धुप्रिया शालिनी । पूर्णब्रह्मसनातनान्तरगता ज्ञेया स्वयोगात्मिका श्रीचक्र० ॥९॥ हस्तिकुम्भसदृक्पयोधरवरा पीनोन्नता नम्रगा हाराद्याभरणा सुरेन्द्रविनुता शृङ्गाटपीठालया । योन्याकारकयोनिमुद्रितकरा नित्यं सुवर्णात्मिका श्रीचक्र० ॥१०॥ लक्ष्मीलक्षणपूर्णकुम्भवरदा लीलाविनोदस्थिता लाक्षारञ्जितपद्मपादयुगला ब्रह्माण्डसंसेविता । लोकालोकितलोककामजयिनी लोकाश्रयाङ्काश्रया श्रीचक्र० ॥११॥ ह्रींकाराङ्कितशङ्करप्रियतनुः श्रीयोगपीठेश्वरी माङ्गल्यायुतपङ्कजाभनयना माङ्गल्यसिद्धिप्रदा । तारुण्यात्तपसार्चिता तरुणिका तन्त्रोपमातन्विता श्रीचक्र० ॥१२॥ सर्वेशाङ्गविहारिणी सकरुणा सर्वेश्वरी सर्वगा सत्या सर्वमयी सहस्रदलगा सप्तार्णवोपस्थिता । सङ्गासङ्गविवर्जिता सुखकरी बालार्ककोटिप्रभा श्री-

चक्र० ॥१३॥ लक्ष्मीशादिविरिञ्चिचक्रमुकुटाद्यष्टाङ्गपीठार्चिता सूर्येन्द्वग्निमयैकपीठनिलया चिन्मात्रकौलेश्वरी । गोप्त्री गुर्विणिगर्विता गगनगा गङ्गा गणेशप्रिया श्रीचक्र० ॥१४॥ कादिक्षान्तसुवर्णबिन्दुसुतनुः स्वर्णादिसिंहासना नानारत्नविचित्रचित्ररचिता चातुर्यचिन्तामणिः । चित्तानन्दविधायिनी सुविपुला कोटित्रयीश्यम्बिका श्रीचक्र० ॥१५॥ ह्रींकारत्रयरूपिणी समयिनी संसारिणी हंसिनी वामाचारपरायणा सुमुकुटा बीजावती मुद्रिणी । कामाक्षी करुणाविचित्ररचिता श्री श्री त्रिमूर्त्यात्मिका श्रीचक्र० ॥१६॥ सा बिम्बप्रतिबिम्बलम्बित लसत् बिम्बाधरा याम्बिका जम्बीरोत्पलकर्णशोभितमुखा जम्बूफल श्रीकुचा । नानारत्नकिरीटदीप्तिलसिता प्रत्यक्षदीक्षात्मिका श्रीचक्रप्रियबिन्दुतर्पणपरा श्रीराजराजेश्वरी ॥१७॥ यत्तेजो निधिभिस्त्वनन्तघृणिभिर्नोपाद्यतं प्रेरितुम् । हार्दं ध्वान्तमपास्य सिक्षणापि तद्ध्यान मात्रा दशा । यत्सद्भादनुभाति सर्वमुदितं भानुं यथा पद्मिनी । प्रत्यग्दाम नमाम तत्तव वपुः श्रीराजराजेश्वरी ॥१८॥

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती दानं पद्मयुगाभयौ च वपुषा सौदामिनीसन्निभा । मुक्ताहारविराजमानविपुलस्तुङ्गस्तनोद्भासिनी पायान्नः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्ती हरिम् ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥१॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥२॥
कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥३॥
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥४॥
अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥५॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै ॥६॥ नमस्तस्यै ॥७॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥८॥
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै ॥९॥ नमस्तस्यै ॥१०॥ नमस्तस्यै नमो नमः ।११।
या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ॥१२॥नमस्तस्यै ॥१३॥नमस्तस्यै नमो नमः ।१४।
या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।१५। नमस्तस्यै ।१६। नमस्तस्यै नमो नमः ।१७।
या देवी सर्वभूतेषु क्षुदारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।१८। नमस्तस्यै ।१९। नमस्तस्यै नमो नमः ।२०।
या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।२१। नमस्तस्यै ।२२। नमस्तस्यै नमो नमः ।२३।
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।२४। नमस्तस्यै ।२५। नमस्तस्यै नमो नमः ।२६।

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।२७। नमस्तस्यै ।२८। नमस्तस्यै नमो नमः ।२९।

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।३०। नमस्तस्यै ।३१। नमस्तस्यै नमो नमः ।३२।

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।३३। नमस्तस्यै ।३४। नमस्तस्यै नमो नमः ।३५।

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।३६। नमस्तस्यै ।३७। नमस्तस्यै नमो नमः ।३८

या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥३९॥ नमस्तस्यै ॥४०॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥४१॥

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥४२॥ नमस्तस्यै ॥४३॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥४४॥

या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥४५॥ नमस्तस्यै ॥४६॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥४७॥

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ॥४८॥ नमस्तस्यै ॥४९॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥५०॥

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।५१। नमस्तस्यै ।५२। नमस्तस्यै नमो नमः ।५३।

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै ।५४। नमस्तस्यै ।५५। नमस्तस्यै नमो नमः ।५६।

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।५७। नमस्तस्यै ।५८। नमस्तस्यै नमो नमः ।५८।
या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।६९। नमस्तस्यै ।६०। नमस्तस्यै नमो नमः ।६१।
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।६२। नमस्तस्यै ।६३। नमस्तस्यै नमो नमः ।६४।
या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ।६५। नमस्तस्यै ।६६। नमस्तस्यै नमो नमः ।६७।
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ।६८।
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै ।६९। नमस्तस्यै ।७०। नमस्तस्यै नमो नमः ।७१।
स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ।७२।
या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः।७३।

बीजैः सप्तभिरुज्ज्वलाकृतिरसौ या सप्तसप्तिद्युतिः सप्तर्षिप्रणताङ्घ्रिपङ्कजयुगा या सप्तलोकार्तिहृत् । काश्मीरप्रवरेशमध्यनगरे-प्रद्युम्नपीठे स्थिता देवीसप्तकसंयुता भगवती श्रीशारिका पातु नः ॥
जय भगवति विन्ध्यवासिनि कैलासवासिनि श्मशानवासिनि हुङ्का-

रिणि कात्यायनि कात्यायनि हिमगिरितनये कुमारमातः गोविन्द-भगिनि शितिकण्ठकण्ठाभरणे अष्टादशभुजे भुजङ्गवलयमण्डिते केयूर-हाराभरणेऽजेय-खड्गत्रिशूलडमरुमुद्गरचषककलशशरचापवराऽभयपा-शपुस्तककपालखट्वाङ्गगदामुसुलतोमरचक्रहस्ते कृपापरे प्रभूतविवि-धायुधे चण्डिके चण्डघण्टे किरातवेशे ब्रह्माणि रुद्राणि नारायणि ब्रह्मचारिणि दिव्यतपोविधायिनि वेदमातः गायत्रि सावित्रि सरस्वति सर्वाधारे सर्वेश्वरि विश्वेश्वरि विश्वकर्त्रि समाधिविश्रान्तिमये चिन्मये चिन्तामणिस्वरूपे कैवल्ये शिवे निराश्रये निरुपाधिमये निरामयपदे ब्रह्मविष्णुमहेश्वरनमिते मोहिनि तोषिणि भयंकरनाशिनि दितिसुत-प्रमथिनि काले कालकिंकरमथिनि कालाग्निशिखे कालरात्रि अजे नित्ये सिंहस्थे योगरते योगेश्वरनमिते भक्तजनवत्सले सुरप्रियकारि-णि दुर्गे दुर्जये हिरण्ये शरण्ये कुरु मां दयाम् ॥ प्रद्युम्नशिखरासीनां मातृचक्रोपशोभिताम् । पीठेश्वरीं शिलारूपां शारिका प्रणमाम्यहम् ॥ अमा माऽवतु कामा च चार्वङ्गी टङ्कधारिणी । तारा च पार्वती चैव यक्षिणी शारिकाष्टमी ॥

श्रीशारिके शरण्ये त्वं मयि दासे कृपां कुरु । ऋणं रोगं भयं शोकं रिपून्नाशय सत्वरम् ॥ प्रद्युम्नशिखरासीनां मातृचक्रोपशोभिताम् । पीठेश्वरीं शिलारूपां शारिकां प्रणमाम्यहम् ॥ अमा चैवतु कामा च चार्वङ्गी टङ्कधारिणी । तारा च पार्वती पायाद्यक्षिणी शारिकाष्टमी ॥ शान्तिं नयस्याशु जनस्य पापं रिक्तत्वमर्थेन निराकरोषि । कायं

निपिञ्चस्यपि भाग्यपूरैः प्रगीयसेऽतः खलु शारिकात्वम् ॥ अमे सुरेशि योगीन्द्रामृतरायनतत्परे ॥ श्रीशारिके नमस्तेऽस्तु पाहि मां शरणागतम् ।१। कामे कामितकामानां पूरणे पूर्णताप्रदे ॥ श्रीशारिके० ।२। चार्वङ्गि कोटिकन्दर्पलावण्ये विश्वमोहिनि ॥ श्रीशारिके० ॥३॥ टङ्कधारिणि शत्रूणां तिलशो देहखण्डिनि ॥ श्रीशारिके ॥४॥ तारे निसर्गगम्भीरभवसागरतारिणि ॥ श्रीशारिके० ॥५॥ पार्वति त्रिजगन्मातर्हिमवद्वंशपावने ॥ श्रीशारिके० ॥६॥ यक्षिणीष्टाष्टसिद्धीनां दायिनि देवपूजिते ॥ श्रीशारिके० ॥७॥ सत्त्वादिशबलेऽनन्तब्रह्माण्डजननीश्वरि ॥ श्रीशारिके० ॥८॥ कलानिधिकलाकान्तकिरीटकुण्डलोज्ज्वले ॥ श्रीशारिके० ॥९॥ श्रीशारिका जगन्माताऽनाथनाथा सुरेश्वरी ॥ प्रीयतां पादयोरेतत्स्तोत्रपुष्पसमर्पणात् ।२०।

इति श्रीशारिकास्तोत्रं समाप्तम् ।

रक्षणीयं वर्धनीयं बहुमूल्यमिदं प्रभो । संसारदुर्गतिहरं भवद्भक्तिमहाधनम् ॥ यदुन्मीलनयुक्त्यैव विश्वमुन्मीलति क्षणात् । तामभीष्टफलोदारकल्पवल्लीं शिवां भजे ॥ रणे मां कालिका पातु द्यूते त्रिपुरसुन्दरी । दुर्गाऽवतु विवादे वा श्रीचक्रं सर्वदाऽवतु ॥ सर्वत्र सर्वदा देवी पातु मां शारिका परा । धनं पुत्रं सुतान्दारान्गृहं यद्यत्तु मामकम् ॥ तत्तन्मम शिवः पातु वामदेवो चिदीश्वरः ॥

। अथ ब्राह्मीविद्या ।

ॐ ॐ ॐ त्रिगुणपुरुष क्षेत्रचर मोहं भिन्धि रजस्तमसी भिन्धि प्राकृतपाशजालं सावरणं परिहर सत्वं गृहाण पुरुषोत्तमोसि सोमसूर्यानलप्रवरपरमधामन् ब्रह्मविष्णुमहेश्वरस्वरूप सृष्टिस्थितिसंहारकारक भ्रूमध्यनिलय तेजोसि धामासि अमृतात्मन् ॐतत्सत् हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं परं ब्रह्मस्वरूप सर्वगत सर्वशक्ते सर्वेन्द्रियग्रन्थिभेदं कुरु कुरु परमं पदं परामर्शय परमार्गं ब्रह्मद्वारं सर कुमार्गं जहि षट्कोशिकं शरीरं त्यज शुद्धोऽसि बुद्धोसि विमलोसि क्षमस्व स्वपदमास्वादयाऽस्वादय स्वाहा ॥ इति ब्राह्मीविद्या ॥

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयांकुशकरां शूलं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

अथ सप्तश्लोकी गीता

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् । यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥१॥ स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च । रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः ॥२॥ सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोक्षिशि-

रोमुखम् । सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥३॥ कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः । सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥४॥ ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् । छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥५॥ सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च । वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥६॥ मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु । मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥७॥ इति श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सप्तश्लोकीगीता समाप्ता ॥

अथ सप्तश्लोकी दुर्गा

शिव उवाच—

देवि त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनी । कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः ॥

देव्युवाच—

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम् । मया तवैव स्नेहेनाप्यम्बास्तुतिः प्रकाश्यते ॥ ॐ अस्य श्रीदुर्गासप्तश्लोकीस्तोत्रमन्त्रस्य नारायण ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः ॥ ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥१॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः

स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि । दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥२॥ सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥३॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे । सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥४॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥५॥ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् । त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥६॥ सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि । एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥७॥

इति सप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्णा ॥

॥ अथ गुरुस्तुतिः ॥

ॐ ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् । एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥१॥ स्मारं स्मारं जनिमृतिभयं जातनिर्वेदवृत्तिर्ध्यायं ध्यायं पशुपतिमुमाकान्तमन्तर्निषण्णम् । पायं पायं सपदि परमानन्दपीयूषधारा भूयो भूयो निजगुरुपदाम्भोजयुग्मं नमामि ॥२॥ यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ । तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ॥३॥ नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम् । शिरसा योगपीठस्थं धर्मकामार्थसिद्धये ॥४॥

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दाम्यानन्दविग्रहम् । यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते परम् ॥५॥ अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् । तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥६॥ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥७॥ हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन । सर्वदेवस्वरूपाय तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥८॥ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुः साक्षान्महेश्वरः । गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥९॥ ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् । ज्ञानमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥१०॥ नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरुरूपिणे । विद्यावतारसंसिद्ध्यै स्वीकृतानेकविग्रह ॥११॥ नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे । सर्वाज्ञानतमोभेदभानवे चिद्घनाय ते ॥१२॥ स्वतन्त्राय दयाक्लृप्तविग्रहाय परात्मने । परतन्त्राय भक्तानां भव्यानां भव्यहेतवे ॥१३॥ ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम् । विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम् ॥१४॥ पुरस्तात्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यधः । सदा मच्चित्तरूपेण विधेहि भवदासनम् ॥१५॥ इति गुरुस्तुतिः ॥

अथ नवग्रहस्तोत्रप्रारम्भः

ॐ नमः सूर्याय ॥ जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम् । तमोरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥१॥ दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम् । नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुटभूषणम् ॥२॥

धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं तं मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥३॥ प्रियङ्गुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् । सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥४॥ देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसंनिभम् । बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥५॥ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् । सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥६॥ नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् । छायामार्तण्डसंभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥७॥ अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् । सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ।८। पालाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् । रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥९॥ इति व्यासमुखोद्गीतं यः पठेत्सुसमाहितः । दिवा वा यदि वा रात्रौ विघ्नशान्तिर्भविष्यति ॥१०॥ नरनारीनृपाणां च भवेद्दुःस्वप्ननाशनम् । ऐश्वर्यमतुलं तेषामारोग्यं पुष्टिवर्द्धनम् ॥११॥ ग्रहनक्षत्रजाः पीडास्तस्कराग्निसमुद्भवाः । ताःसर्वाः प्रशमं यान्ति व्यासो ब्रूते न संशयः ॥१२॥ इति श्रीवेदव्यासविरचितं आदित्यादिनवग्रहस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

श्री महिम्नःस्तोत्रम्

ओं नमः शिवाय

आधीनामगधं दिव्यं व्याधीनां मूलकृन्तनम् उपद्रावाणां दलनं महादेवमुपास्महे ॥१॥ अहं पापी पाप क्षपण निपुणः शंकर भवान्

अहं भीतो भीताभयवितरणे ते व्यसनिता। अहं दीनो दीनोद्धरण विधि सज्जस्त्वदितरत् न जानेहं वक्तुं कुरु सकल शोच्ये मयि कृपाम् ॥ २ ॥ जनस्त्वद्पादाब्जश्रवणमननध्यानानिपुणाः स्वयं
न ते निस्तीर्णा न खलु करुणा तेषु करणा। भवे लीने दीने मयि मननहीने न करुणा कथं नाथ ख्यातस्त्वमसि करुणासागर इति ॥३॥ उॅं महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः। अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिनामावधि गृणन् ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥४॥ अतीतः पन्थानं तव स महिमा वाङ्मनसयोरतद्व्यावृत्त्यायं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि। स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥५॥ मधुस्फीता वाचः परममृतं निर्मितवतस्तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्। मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥६॥ तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्। त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु। अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥७॥ किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं किमाधारो धाता सृजति किमुपादानमिति च। अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसुरदुस्थो हतधियः कुतर्कोयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगताम् ॥८॥ अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोपि जगतामधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति। अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो यतो मन्दास्त्वां

प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥९॥ त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णव-
मिति प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च । रुचीनां वैचित्र्या-
दृजुकुटिलनानापथजुषां नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ।१०।
महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः कपालं चेतीयत्तव वरद
तन्त्रोपकरणम् । सुरास्तां तामृद्धिं विदधति भवद्भ्रूप्रणिहितां नहि
स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥११॥ ध्रुवं कश्चित् सर्वं स-
कलमपरस्तु ध्रुवमिदं परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन तैर्विस्मित इव स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न
खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥१२॥ तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिञ्चो हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्दवपुषः । ततो भक्ति श्रद्धाभरगुरु
गृणद्भ्यां गिरिश यत् स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति
॥१३॥ अयत्नादासाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं दशास्यो यद्बाहून-
भृत रणकण्डूपरवशान् । शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमि[redacted] ॥१४॥ अमुष्य त्वत्से-
वासमधिगतसारं भुजवनं बलात्कैलासेपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः ।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलितांगुष्ठशिरसि प्रतिष्ठा त्वय्यासीद्ध्रुवमुप-
चितो मुह्यति खलः ॥१५॥ यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि
सतीम् अधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः । न तच्चित्रं तस्मिन्
वरिवसितरि त्वच्चरणयोर्नकस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः
॥१६॥ अकाण्ड ब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा विधेयस्यासीद्य-
स्त्रिनयन विषं संहृतवतः । स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न

श्रियमहो विकारोपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्ग व्यसनिनः ॥१७॥ असि-
द्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो
यस्य विशिखाः । स पश्यन्नीश ? त्वामितरसुरसाधारणमभूत् स्मरः
स्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥१८॥ मही पादाघाताद्-
व्रजति सहसा संशयपदं पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम् ।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु
वामैव विभुता ॥१९॥ वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते । जगद्द्वीपाकारं जलधि-
वलयं तेन कृतमित्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ॥२०॥
रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथोरथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथ चरण-
पाणिः शर इति । दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधिर्विधेयैः
क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥२१॥ हरिस्ते साहस्रं
कमल बलिमाधाय पदयोर्यदेकोने तस्मिन् निजमुदहरन्नेत्र कमलम् ।
गतो भक्त्युद्रेकः परिनतिमसौ चक्रवपुषा त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर
जागर्ति जगताम् ॥२२॥ क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते । अतस्त्वां उत्प्रेक्ष्य क्रतुषु
फलदान प्रतिभुवं श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥२३॥
क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृतामृषीणामार्त्विज्यं शरणद
सदस्याः सुरगणाः । क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो ध्रुवं
कर्तुं श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥२४॥ प्रजानाथं नाथ प्रस-
भमभिकं स्वां दुहितरं गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा ।

धनुष्पाणेर्यातं दिवमऽपि सपत्राकृतममुं त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥२५॥ अपूर्वं लावण्यं विवसनतनोस्ते विमृशतां मुनीनां दाराणां समजनि स कोपव्यतिकरः । यतोभग्ने गुह्ये सकृद-ऽपि सपर्यां विदधतां ध्रुवं मोक्षोऽश्लीलं किमऽपि पुरुषार्थं प्रसवि ते ॥२६॥ स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत् पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि । यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत देहार्धघटना-दवैति त्वामद्धा वत वरद मुग्धा युवतयः ॥२७॥ श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराश्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः । अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि ॥२८॥ मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः । यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ॥२९॥ त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमुधरणिरात्मा त्वमिति च । परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणतां बिभ्रतु गिरं न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥३०॥ त्रयीं तिस्रो वृतीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति । तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम् ॥३१॥ भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहांस्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम् । अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते ॥३२॥ वपुष्प्रादुर्भावादनुमितमिदं जन्मनि पुरा पुरारे ? नैवाहं

क्वचिदपि भवन्तं प्रणतवान् । नमन्मुक्तः संप्रत्यतनुरहमग्रेऽप्यनतिमान् महेश क्षन्तव्यं तदिदमपराधद्वयमपि ॥३३॥ नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः । नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो नमः सर्वस्मै ते तदिदमितिसर्वाय च नमः ॥३४॥ बहलरजसे विश्वोपत्तौ भवाय नमो नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः । जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः । प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥३५॥ कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेद क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः । इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥३६॥ असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी । लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥३७॥ असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौलेः ग्रथितगुणमहिम्नो ज्ञानकारुण्यमूर्तेः । सकलगुणवरेण्यः पुष्पदन्ताभिधानो रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतत् चकार ॥३८॥ अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः । स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च ॥३९॥ दीक्षा दानं तपस्तीर्थं स्नानं योगादिकाः क्रिया । महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥४०॥ महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः । अघोरान्नापरो मन्त्रः नास्ति तत्त्वं गुरो परम् ॥४१॥ कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः शिशुधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः स खलु निज-

महिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः ।४२। सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्य-चेताः । व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥४३॥ श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण । कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥४४॥ इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः । अर्पिता तेन मे देवः प्रीयतां च सदाशिवः ।४५।

भवान्यष्टकम्

न तातो न माता न बन्धुर्न दाता न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो भर्ता। न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥१॥ भवाब्धावपारे महादुःखभीरुः पपात प्रकामी प्रलोभी प्रमत्तः । कुसंसारपाशप्रबद्धः सदाहम्। गतिस्त्वं० ॥२॥ न जानामि दानं न च ध्यानयोगं न जानामि तन्त्रं न च स्तोत्रमन्त्रम् । न जानामि पूजां न चऽन्यासयोगम्। गतिस्त्वं०॥३॥ न जानामि पुण्यं न जानामि तीर्थं न जानामि मुक्तिं लयं वा कदाचित् । न जानामि भक्तिं व्रतं वापि मातर्गतिस्त्वं० ॥४॥ कुकर्मी कुसङ्गी कुबुद्धिः कुदासः कुलाचारहीनः कदाचारलीनः । कुदृष्टिः कुवाक्यप्रबन्धः सदाहम् । गतिस्त्वं० ॥५॥ प्रजेशं रमेशं महेशं सुरेशं दिनेशं निशी-

येश्वरं वा कदाचित्। न जानामि चान्यत् सदाहं शरण्ये। गतिस्त्वं ॥६॥ विवादे विषादे प्रमादे प्रवासे जले चानले पर्वते शत्रुमध्ये। अरण्ये शरण्ये सदा मां प्रपाहि। गतिस्त्वं० ॥७॥ अनाथो दरिद्रो जरारोगयुक्तो महाक्षीणदीनः सदा जाड्यवक्त्रः। विपत्तौ प्रविष्टः प्रणष्टः सदाहम्। गतिस्त्वं ॥८॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं भवान्यष्टकं सम्पूर्णम्।

अथ गौरीस्तुतिः ॥

ॐ लीलारब्धस्थापितलुप्ताखिललोकां लोकातीतैर्योगिभिरन्तर्हृदि मृग्याम। बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जां गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ॥१॥ आशापाशक्लेशविनाशं विदधानां पादाम्भोजध्यानपराणां पुरुषाणाम। ईशीमीशाङ्गार्धहरां तां तनुमध्यां गौरीमम्बा० ॥२॥ प्रत्याहारध्यानसमाधिस्थितिभाजां नित्यं चित्ते निर्वृतिकाष्ठां कलयन्तीम्। सत्यज्ञानानन्दमयीं तां तडिदाभां गौरी० ॥३॥ चन्द्रापीडानन्दितमन्दस्मितवक्त्रां चन्द्रापीडालङ्कृतलोलालकभाराम। इन्द्रोपेन्द्राद्यर्चितपादाम्बुजयुग्मां गौरी० ॥४॥ नानाकारैः शक्तिकदम्बैर्भुवनानि व्याप्य स्वैरं क्रीडति यासौ स्वयमेका। कल्याणीं तां कल्पलतामानतिभाजां गौरी० ॥५॥ मूलाधारादुत्थितवर्त्नीं विधिरन्ध्रं सौरं चान्द्रं धाम विहाय ज्वलिताङ्गीम्। स्थूलां

सूक्ष्मां सूक्ष्मतरां तामभिवन्द्यां गौरी० ॥६॥ आदिक्षान्तामक्षर-मूर्त्या विलसन्तीं भूते भूते भूतकदम्बं प्रसवित्रीम् । शब्दब्रह्मानन्द-मयीं तामभिरामां गौरी० ॥७॥ यस्याः कुक्षौ लीनमखण्डं जग-दण्डं भूयो भूयः प्रादुरभूदक्षतमेव । भर्त्रा सार्धं तां स्फटिकाद्रौ विहरन्तीं गौरी० ॥८॥ यस्यामेतत्प्रोतमशेषं मणिमाला सूत्रे यद्व-त्क्वापि चरं चाप्यचरं च । तामध्यात्मज्ञानपदव्या गमनीयां गौरी० ॥९॥ नित्यः सत्यो निष्कल एको जगदीशः साक्षी यस्याः सर्ग-विधौ संहरणे च । विश्वत्राणक्रीडनशीलां शिवपत्नीं गौरी० ॥१०॥ प्रातःकाले भावविशुद्धिं विदधानो भक्त्या नित्यं जल्पति गौरीदशकं यः । वाचां सिद्धिसम्पत्तिमुच्चैः शिवभक्तिं तस्यावश्यं पर्वतपुत्री विदधाति ॥११॥ इति गौरीस्तुतिः ॥

ओं शम

A HYMN

By **Abhinava Gupta**

(Translated By MASTER JI (ZINDA KAUL)

ऊँ शिवचामरस्तुति

ॐ व्याप्तचराऽचर माव विशेषं, चिन्मयमेकमऽनन्तमनादिम् ।
मैरवनाथमऽनाथ शरण्यं, त्वन्मयचित्त तया हृदि वन्दे ॥१॥

Great God, prevading all existing things
That move about or do not seem to move
Pure spirit, one, eternal, infinite,
Thou refuge of all waifs, Thou awful one,
With my mind filled with Thee I worship Thee
Within the sanctum of my loving heart.

त्वन्मयमेतदऽशेषमिदानी, माति मम त्वदऽनुग्रहशक्तया ।
त्वं च महेष ! सदैव ममाऽत्मा, स्वाऽऽत्ममय मम तेन समस्तम् ॥२॥

Today by grace of Thee the universe
Appears to me Thy self ; and Thou art ay
My *atma* ; ergo, all This is myself.

स्वात्मऽनि विश्वगते त्त्वयि नाथे तेत न संसृतिमीतिः कथाऽस्ति ।
सत्स्वपि दुर्वरदुःखविमोह, त्रासविधायिषु कर्मगणेषु ॥३॥

The world thus being filled with Thee, and Thou
My Self, I fear not in the least the wheel
Of births and deaths-although past *Karma* heaped
Bring gnawing pains and fears, and fainting fits.

अन्तक ! मा प्रति मा दृशमेनां, क्रोधकरालतमां विदधीहि ।
शङ्कर सेवनचिन्तनधीरो मीषण मैरवशक्तिमयोऽस्मि ॥४॥

Cast not at me that dreadful angry look,
O Death,—for, thinking of and serving S'iv,
I'm strong and weild dread Bhairav's mighty pow'r

इत्थमुपोढ मवन्मय संविद्दीधितिदारित भूरितमिस्रः ।
मृत्युयमान्तककर्मपिशाचे, नाथ ! नमोऽस्तु न नातु विभेमि ॥५॥

The veil of darkness being torn away
By sun-rays of God-consciousness, which now
Is mine, the petty bogies—*Karma*, death,
'Controller', 'Ender'—cannot frighten me.

प्रोदित सत्यविबोधमरीचि, प्रेक्षित विश्व पदार्थसतत्त्वः ।
भावपरामृतनिर्भरपूर्णे, त्वय्यऽहमाऽऽत्मनि निवृतिमेमि ॥६॥

The light of knowledge of the Truth has dawned ;
The Being in all things is well discerned,
I find true peace in Thee my highest Self,
Who brimmest over with *amrit* of Love's joy.

मानस गोचरमेति यदैव, क्लेशदशाऽतनुताप विधात्री ।
नाथ ! तदैव मम त्वदऽभेद स्तोत्रपराऽमृतवृष्ठिरुदेति ॥७॥

No sooner does distress invade my heart
And there cause scorching, burning fevers, pains,
Than hymns of oneness with Thyself of me
Cause *amrit*—Pouring clouds to rain on it.

शङ्कर ! सत्यमिद व्रतदान, स्तानतपो भवतापविनाशि ।
तावकशास्त्रपराऽमृतचिन्ता सिन्धति चेतसि निवृतिधाराः ॥८॥

Great vows, rich gifts, austerities and baths
In holy streams, no doubt, annal the pain,
The fever, of rebirths ; but merest thought
Of thy great *S'stras* nectar-sweet, will pour
A steady stream of bliss upon the mind.

नृत्यति गायति हृष्यति गाढं, संविदियं मम भैरवनाथ :
त्वां प्रियमाऽप्य सुदर्शनमेकं, दुर्लभमऽन्यजनैः सम यज्ञम् ॥९॥

Great S'iv, my soul rejoices, dances, sings
When she finds Thee, her Love-the one, the Good
Whom few non-S'aivas ever find with ease,
Who knows His own good time (to grant His grace)

वसुरस पौषे कृष्णादशम्यामऽभिनवगुप्तः स्तवमिदमकरोत् ।
येन विभुर्भवमरुसन्तापं शमयति झटिति जनस्य दयालु ॥१०॥

It was the tenth of pau‸ 'a's dark fortnight,
"Eight—nine" (?) when *Abhinav* composed this hymn,
Which, if recited by a pious man,
Moves S'iv, the marciful, to nullify
The 'heat' of this world's desert in a trice.